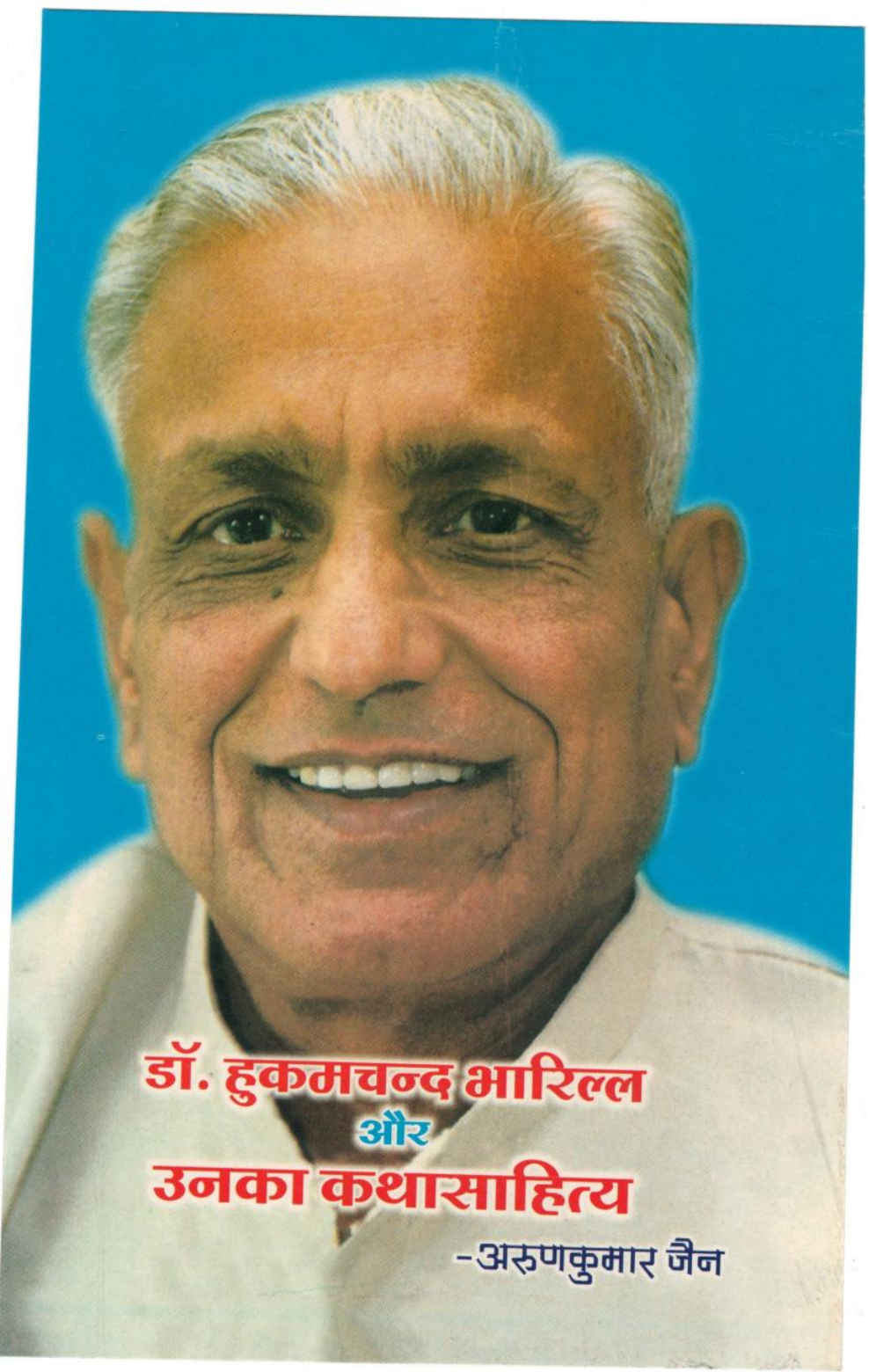

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
और
उनका कथासाहित्य

-अरुणकुमार जैन

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल और उनका कथासाहित्य

राजस्थान विश्वविद्यालय की एम.ए. उत्तरार्द्ध (हिन्दी)
परीक्षा 2002-2003 के पंचम प्रश्न-पत्र
के विकल्प के रूप में स्वीकृत लघुशोध प्रबन्ध

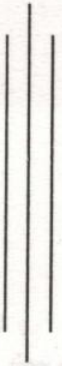

लेखक

अरुणकुमार शास्त्री, बड़ामलहरा

एम.ए., बी.एड.

प्रकाशक

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल चेरिटेबल ट्रस्ट

304 सनफ्लैश, रिषि कॉम्पलेक्स, होलीक्रास रोड
आई.सी. कालोनी, बोरीवली (वैस्ट) मुम्बई - 400103

प्रथम संस्करण : 1000
14 जुलाई, 2003
(वीरशासन जयन्ती)
द्वितीय संस्करण : 1000
15 मार्च 2004
(ऋषभदेव जयन्ती)

मूल्य:
साधारण संस्करण : बारह रुपये
पुस्तकालय संस्करण : बीस रुपये

प्राप्ति स्थल :
श्री टोडरमल स्मारक भवन
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

मुद्रक :
जे.के.ऑफसैट प्रिन्टर्स
जामा मस्जिद,
दिल्ली - 110006

प्रकाशकीय

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल और उनका कथासाहित्य विषयक लघुशोध प्रबंध का प्रकाशन करते हुए यह ट्रस्ट अत्यंत गौरव का अनुभव कर रहा है।

श्री अरुणकुमार शास्त्री द्वारा लिखित तथा राजस्थान विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग द्वारा एम.ए. उत्तरार्द्ध परीक्षा 2002-2003 के पंचम प्रश्न-पत्र के विकल्प के रूप में स्वीकृत यह लघुशोध निस्संदेह डॉ. भारिल्ल के कथा साहित्य का दिग्दर्शक है।

श्री अरुण शास्त्री श्री टोडरमल सिद्धान्त महाविद्यालय के भूतपूर्व छात्र तथा डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के सुयोग्य शिष्यों में से हैं। उन्होंने यह शोध प्रबन्ध राजस्थान विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ. करतारसिंह मीणा के निर्देशन में अत्यन्त श्रमपूर्वक तैयार किया है, इसके लिए यह ट्रस्ट श्री मीणाजी एवं श्री अरुण शास्त्री का आभारी है।

यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि इसी महाविद्यालय के एक और भूतपूर्व छात्र डॉ. महावीर प्रसाद टोकर ने सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर से ''डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल : व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व'' विषय पर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। उनके शोधप्रबंध के प्रकाशन की व्यवस्था भी ट्रस्ट कर रहा है, जो शीघ्र ही आपके हाथों में पहुँचेगा।

इसके अतिरिक्त श्री शिखरचन्द जैन ने हिन्दी एम.ए. अन्तिम वर्ष के चतुर्थ पेपर के रूप में 'डॉ. भारिल्ल : व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व' विषय पर तथा सुश्री ममता गुप्ता ने 'धर्म के दशलक्षण : एक अनुशीलन' विषय पर 100 पृष्ठीय लघुशोध प्रबन्ध लिखे हैं, जो कि राजस्थान विश्वविद्यालय द्वारा सन् 2001 में स्वीकृत हो चुके हैं।

इसके अलावा कुछ अन्य शोधार्थी इस समय डॉ. भारिल्ल के साहित्य पर शोध कार्य कर रहे हैं, जो कि गौरव का विषय है।

हमारे ट्रस्ट का यह प्रथम प्रकाशन है। अतः इस अवसर पर ट्रस्ट का सामान्य परिचय देना उचित प्रतीत होता है। आज से आठ वर्ष पहले जब डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ६० वर्ष के हुये तो उनकी षष्टिपूर्ति के अवसर पर देवलाली ट्रस्ट वालों ने उनका सम्मान करते हुए उन्हें साठ हजार रुपयों की

थैली समर्पित की, जिसमें उन्होंने और उनके पुत्र-पुत्रियों नें दो लाख चालीस हजार रुपये मिलाकर तीन लाख का एक **डॉक्टर हुकमचन्द भारिल्ल चेरिटेबल ट्रस्ट** का गठन कर लिया और यह संकल्प किया कि इस ट्रस्ट में अपने परिवार के अतिरिक्त किसी अन्य का सहयोग स्वीकार नहीं करेंगे।

चूंकि इस ट्रस्ट का गठन डॉ. भारिल्ल के सम्मान की प्रदत्त राशि से हुआ था; अतः यह संकल्प किया कि सर्वप्रथम इस ट्रस्ट के माध्यम से विद्वानों का सम्मान ही आरंभ किया जाय।

इस शृंखला में अबतक डॉ. उत्तमचंदजी जैन सिवनी, पंडित अभयकुमारजी शास्त्री, छिन्दवाड़ा, ब्र. अभिनन्दनकुमारजी खनियांधाना और डॉ. महावीरकुमार जैन उदयपुर को सम्मानित किया जा चुका है। इस सम्मान में दस हजार रुपये की नकद राशि, शाल, नारियल, माल्यार्पण, एवं प्रशस्तिपत्र किसी पंचकल्याणक जैसे अच्छे अवसर पर ससम्मान प्रदान किया जाता है।

इसके अतिरिक्त अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् की ओर से गुरु गोपालदास बरैया पुरस्कार एवं वर्णी गणेश पुरस्कार दिये जाते हैं। इन पुरस्कारों में पाँच हजार रुपये, शाल, नारियल, माल्यार्पण एवं प्रशस्ति दी जाती है। इन दोनों पुरस्कारों का व्यय भी डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल चेरिटेबल ट्रस्ट ही वहन करता है।

डॉ. भारिल्ल की जन्मभूमि बरौदास्वामी के जिनमन्दिर में एक वीतराग-विज्ञान स्वाध्याय भवन का निर्माण भी इस ट्रस्ट ने करवाया है, जिसमें लगभग 2 लाख रुपये राशि व्यय हुई है।

अब प्रकाशन का कार्य आरंभ किया है, जिसका यह प्रथम प्रकाशन प्रस्तुत करते हुए प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

इस शोधप्रबन्ध को आकर्षक कलेवर में प्रस्तुत करने का श्रेय श्री अखिल बंसल को जाता है, इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

न केवल छात्र वर्ग को अपितु अन्य जनसामान्य को भी यह लघुशोध प्रबन्ध एक नई दिशा प्रदान करेगा, इसी आशा और विश्वास के साथ -

परमात्मप्रकाश भारिल्ल
महामंत्री

प्राक्कथन

हिन्दी साहित्य में समागत जैन साहित्य को समृद्ध करनेवाले अध्यात्मवेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल का स्थान अग्रगण्य है। आध्यात्मिक मनीषी डॉ. भारिल्ल द्वारा जैनदर्शन व जैन अध्यात्म को परिप्रेक्ष्य में रखकर लिखा गया कथासाहित्य, हिन्दीसाहित्य के लिए अभूतपूर्व योगदान है।

उनके कथासाहित्य का संक्षिप्त निदर्शन कराने वाला पाँच अध्यायों में विभक्त यह लघुशोध आपके सामने है। इसमें कथासाहित्य के निकष पर डॉ. भारिल्ल की कहानियों की समीक्षा तो की ही गई है, साथ में उनके कथासाहित्य (उपन्यास व कहानियों) में निहित मूलाभिव्यंजना एवं विषय-वैविध्य को भी सुस्पष्ट किया गया है।

यद्यपि डॉ. भारिल्ल के कथानकों का मूल प्रतिपाद्य अध्यात्म की प्रतिष्ठा करना है, फिर भी अनेक मानवीय मूल्यों जैसे - संवेदना, नैतिकता, सहानुभूति और सदाचार की झलक भी दिखाई पड़ती है। इन सबके आधार पर इस लघुशोध में मुझसे जो भी लिखा गया है, वह आपके सामने है। इस लघुशोध में समाहित विषय वस्तु को संक्षिप्त में इसप्रकार देख सकते हैं -

प्रथम अध्याय में कथाकार डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के 'व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व' का विवेचन किया गया है, जिसके तहत लेखक का जीवन परिचय तथा उनके व्यक्तित्व के वैशिष्ट्य को स्पष्ट किया गया है तथा उनकी रचनाओं का विवरण दिया गया है।

द्वितीय अध्याय में 'उपन्यास के निकष पर समीक्षात्मक परिशीलन' शीर्षक के अन्तर्गत डॉ. भारिल्ल के उपन्यास की समीक्षा कथावस्तु , संवाद-योजना, चरित्र-चित्रण, देशकाल, भाषा-शैली और उद्देश्य - इन छह तत्त्वों के आधार पर की गई है तथा भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के विचार भी प्रस्तुत किये गए हैं।

तृतीय अध्याय में 'कहानी के निकष पर समीक्षात्मक परिशीलन' शीर्षक के अंतर्गत डॉ. भारिल्ल की कहानियों की समीक्षा कहानी के तत्त्वों के आधार पर की गई है।

चतुर्थ अध्याय में 'डॉ. भारिल्ल के कथा साहित्य में निहित मूलाभिव्यंजना' शीर्षक में डॉ. भारिल्ल के उपन्यास तथा कहानियों में प्रतिपाद्य या मूल कथ्य को स्पष्ट किया है। इनके उपन्यास की मूलाभिव्यंजना अंधविश्वासों, रूढ़ियों एवं आडम्बरों पर कुठाराघात कर सत्य व तर्क की कसौटी पर अध्यात्म की प्रतिष्ठा करना है।

पंचम अध्याय में 'डॉ. भारिल्ल के कथानकों का विषय-वैविध्य' शीर्षक के अन्तर्गत डॉ. भारिल्ल के कथानकों के विषय-वैविध्य का विवेचन है। इन्होंने अपने उपन्यास में अंधविश्वासों पर कुठाराघात करने के साथ ही, समाज व धर्म का सच्चा स्वरूप स्पष्ट करते हुए सामाजिक व धार्मिक एकता को स्पष्ट किया है एवं आध्यात्मिकता की प्रतिष्ठा करने के साथ ही जैनदर्शन के गूढ़ रहस्यों व सिद्धान्तों का भी उद्घाटन हुआ है।

इसप्रकार इस लघुशोध को लिखने में स्वयं डॉ. भारिल्लजी का एवं हमारे निर्देशक श्री करतारसिंहजी मीणा का सुयोग्य निर्देशन रहा; जिससे यह लघुशोध पूर्णता को प्राप्त कर पाया है; अतः उनका एवं जैन अध्यात्म के विशेषज्ञ बुधजनों - ब्र. पं. श्री यशपालजी, पं. शान्तिंकुमारजी पाटील, श्री अखिलजी बंसल, पं. पीयूषकुमारजी एवं पं. संजयकुमारजी एवं मेरे कुछ अनन्य मित्रों का जिनके मार्गदर्शन से यह लघुशोध पूर्ण हुआ है, उन सभी का हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। इति शुभं भूयात्।

पुनश्च -

साहित्य-कथा पर लघुशोध यह लिखना रहा मोदकारी।
डॉक्टर भारिल्ल कथा जगत में चिरजीवी मंगलकारी॥
श्री करतारसिंहजी मीणा निर्देशक सहित्यप्रवर।
जिनके सुसान्निध्य में रहकर लघु यह शोध लिखा सुखकर॥
यद्यपि मैं अल्पज्ञ मति हूँ, सुधी करें प्रक्षालन दोष।
पुनरपि उत्कट इच्छा है यह, लघु शोध हो गुण का कोश॥
जिनने भी सहयोग किया है, वे सब साधुवाद पाएं।
अरुण अर्क की यही कामना, अन्तहीन प्रगति पाएं॥

अरुण कुमार जैन
बड़ामलहरा

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
प्रथम अध्याय	9
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व	
द्वितीय अध्याय	26
उपन्यास के निकष पर समीक्षात्मक परिशीलन	
तृतीय अध्याय	57
कहानी के निकष पर समीक्षात्मक परिशीलन	
चतुर्थ अध्याय	83
डॉ. भारिल्ल के कथा साहित्य में निहित मूलाभिव्यंजना	
क. कहानियों में निहित मूलाभिव्यंजना	
ख. उपन्यास में निहित मूलाभिव्यंजना	
पंचम अध्याय	94
डॉ. भारिल्ल के कथानकों का विषय-वैविध्य	
उपसंहार	116
संदर्भ ग्रन्थ-सूची	119

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

०१. पण्डित टोडरमल व्यक्तित्व और कर्तृत्त्व	२०.००
०२. समयसार अनुशीलन भाग - १ (गाथा १ से ६८ तक)	२०.००
०३. समयसार अनुशीलन भाग - २ (गाथा ६९ से १६३ तक)	२०.००
०४. समयसार अनुशीलन भाग - ३ (गाथा १६४ से २५६ तक)	२०.००
०५. समयसार अनुशीलन भाग - ४ (गाथा २५७ से ३७१ तक)	२०.००
०६. समयसार अनुशीलन भाग - ५ (गाथा ३७२ से ४१५ तक)	२५.००
०७. समयसार अनुशीलन भाग - ५ उत्तरार्द्ध	१५.००
०८. परमभावप्रकाशक नयचक्र	२०.००
०९. बिखरे मोती	१६.००
१०. सत्य की खोज	१६.००
११. आत्मा ही है शरण	१५.००
१२. चिन्तन की गहराईयाँ	२०.००
१३. सूक्ति सुधा	१८.००
१४. तीर्थंकर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ	१५.००
१५. बारह भावना : एक अनुशीलन	१२.००
१६. धर्म के दशलक्षण	१६.००
१७. दृष्टि का विषय	१०.००
१८. क्रमबद्धपर्याय	८.००
१९. वीतराग-विज्ञान प्रशिक्षण निर्देशिका	८.००
२०. गागर में सागर	७.००
२१. आप कुछ भी कहो	६.००
२२. पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव	६.००
२३. आचार्य कुन्दकुन्द और उनके पंच परमागम	५.००
२४. युगपुरुष कानजीस्वामी	५.००
२५. णमोकार महामंत्र : एक अनुशीलन	५.००
२६. मैं कौन हूँ ?	४.००
२७. निमित्तोपादान	३.५०
२८. अहिंसा : महावीर की दृष्टि में	३.००
२९. मैं स्वयं भगवान हूँ	३.००
३०. रीति-नीति	३.००
३१. शाकाहार	२.५०
३२. तीर्थंकर भगवान महावीर	२.५०

३३. चैतन्य चमत्कार, ३४. गोम्मेटश्वर बाहुबली, ३५. वीतरागी व्यक्तित्व : भगवान महावीर, ३६. बारह भावना, ३७. कुन्दकुन्द शतक, ३८. शुद्धात्म शतक, ३९. समयसार पद्यानुवाद, ४०. योगसार पद्यानुवाद ४१. अनेकान्त और स्याद्वाद, ४२. शाश्वत तीर्थधाम सम्मेदशिखर, ४३. सार समयसार, ४४. बालबोध पाठमाला भाग -२, ४५. बालबोध पाठमाला भाग - ३, ४६. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग - १, ४७. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग - २, ४८. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग - ३, ४९. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग १-, ५०. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग - २, ५१. गोली का जबाब गाली से भी नहीं, ५२. समयसार कलश पद्यानुवाद, ५३. बिन्दु में सिन्धु।

प्रथम अध्याय

व्यक्तित्व एवं कर्त्तृत्व

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल जैन आध्यात्मिक चेतना के अग्रदूत, तार्किक शैली से समुद्भूत और जैन व जैनेतर दर्शनों के मर्मज्ञ निष्णात मनीषी हैं।[1] इनका व्यक्तित्व बहुआयामी और कर्त्तृत्व विशाल है। इनके व्यक्तित्व व कर्त्तृत्व का अपेक्षित विवेचन 'व्यक्तित्व एवं कर्त्तृत्व' नामक इस प्रथम अध्याय में विवेच्य है। चूँकि डॉ. भारिल्ल जैनजगत के लोकप्रिय प्रवक्ता, आकर्षक लेखक, सजग सम्पादक एवं कुशल कवि भी हैं।

अतः उनके इस विशाल व्यक्तित्व एवं अपार कर्त्तृत्व का उल्लेख निम्नप्रकार से यहाँ प्रस्तुत करते हैं -

व्यक्तित्व

जैन अध्यात्म की अरुण रश्मियों को विकीर्णित करनेवाले तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल प्रबुद्ध दार्शनिक चिन्तक हैं। ये न केवल भारत देश में, अपितु विदेशों में भी जैन अध्यात्म का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। वर्तमान में, जैनदर्शन के सर्वश्रेष्ठ विद्वान् होने का गौरव इनको हासिल है। किसी भी विषय की व्याख्या सारगर्भित और मौलिक ढंग से करना आपकी लेखनी का कमाल है।[2]

सामान्य परिचय-

डॉ. भारिल्ल का जन्म ज्येष्ठ कृष्णा अष्टमी विक्रम संवत् 1992, तदनुसार 25 मई, 1935 ई. को ललितपुर (उ.प्र.) के बरौदास्वामी नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिताजी का नाम श्री हरदासजी एवं माता का नाम श्रीमती पार्वतीबाई था। तीन भाइयों में इनका क्रम द्वितीय है। मैथिलीशरण गुप्त के भाई सियारामशरण गुप्त की तरह इनके बड़े भाई पण्डित रतनचन्द भारिल्ल भी कुशल साहित्यकार और आध्यात्मिक प्रवक्ता हैं।

---

१. सन्मति-सन्देश (मासिक) दिल्ली, फरवरी, १९७८

२. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) खण्ड-२,

गाँव में विद्यालय न होने के कारण इन्हें 5 कि. मी. दूर दूसरे गाँव में नदी पार करके अध्ययनार्थ जाना पड़ता था। इसप्रकार प्राथमिक शिक्षा के बाद माध्यमिक शिक्षार्थ आप मुरैना (म.प्र.) विद्यालय में प्रविष्ट हुए। तदनन्तर शासकीय सेवा करते हुए इन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त की। अनेक विकरालताओं व प्रतिकूलताओं के बावजूद आप रंचमात्र भी चलायमान नहीं हुए। आप जैसे महापुरुषों का जीवन वस्तुत: प्रतिकूलताओं से भरा हुआ ही होता है; अत: आपके ऊपर निम्न उक्ति चरितार्थ होती है-

"जितने कष्ट कंटकों में जिनका जीवन सुमन खिला।
गौरव-गंध उन्हें उतना ही, यत्र-तत्र सर्वत्र मिला॥"

सम्प्रति आप अध्यात्म के लिए देश-विदेश में प्रख्यात संस्था - पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के महामंत्री व सूत्रधार हैं।

इनके विशेष व्यक्तित्व को हम निम्नांकित प्रकार से देख सकते हैं-

1. सिद्धहस्त लेखक-

डॉ. भारिल्ल एक सिद्धहस्त लेखक हैं। गद्य और पद्यमय प्रकाशित इनकी कृतियों की संख्या 57 है, तथा अप्रकाशित विपुल साहित्य प्रथक् है। इनका साहित्य सरस, सरल, मार्मिक और सोद्देश्य है। इनकी कृतियाँ अब तक 40 लाख की संख्या में लोगों के पास में पहुँच चुकी हैं, यह तथ्य ही इनकी कृतियों की लोकप्रियता का दिग्दर्शन करा देता है। विचार प्रधान निबन्धलेखन की तरह कथाशिल्प में भी डॉ. भारिल्ल सिद्धहस्त हैं।[१] भारिल्लजी एक सिद्धहस्त कथाकार हैं तथा निश्चित ही उनका सभी विधाओं पर समान अधिकार है - यह इनकी कृतियों ने सिद्ध कर दिया है।[२]

2. आध्यात्मिक तार्किक प्रवक्ता-

डॉ. भारिल्ल देश व विदेश में प्रख्यात तार्किक आध्यात्मिक प्रवक्ता हैं। इनकी वक्तृत्व शैली गजब की आकर्षक, रोचक और मनोवैज्ञानिक होने के साथ ही तर्क की निकष पर सत्य को स्पष्ट कराने वाली होती है, जिससे श्रोता मंत्रमुग्ध की तरह सुनते जाते हैं।[३]

१. जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) जयपुर, मार्च (प्रथम) १९८४
२. समन्वय वाणी (पाक्षिक) जयपुर, अप्रैल (द्वितीय) १९८४
३. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) खण्ड-२,

३. सामाजिक व धार्मिक प्रचेता-

विलक्षण व्यक्तित्व के धनी डॉ. भारिल्ल समाज व धर्म के बारे में भी गहरी चिंतनशक्ति रखते हैं, वे अपने उपन्यास (सत्य की खोज) के नायक विवेक के माध्यम से लिखते हैं-

''धर्म के नाम पर न तो मैं समाज को विघटित होते देख सकता हूँ और न मुझसे धर्म की कीमत पर संगठन ही होगा। मैं धर्म को कायम रखकर समाज को संगठित करूँगा व समाज को संगठित रखकर धर्म को उसके सामने प्रस्तुत करूँगा - यह मेरा संकल्प है।[१]''

४. सर्वोदयी क्रांतिकारी विचारक -

डॉ. भारिल्ल एक सर्वोदयी क्रान्तिकारी विचारक हैं, उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में अपने विचार अभिव्यक्त किए हैं। वे राजनीति के बारे में लिखते हैं-

''राजनीति अपना रस सब जगह से ग्रहण करती है, देश की अखंडता के लिए मात्र जमीन ही जीतना जरूरी नहीं होता, जनता का दिल भी जीतना होता है।[२]''

इसीप्रकार भारिल्लजी पुरुषों से तुलना करते हुए नारियों के बारे में लिखते हैं -

''सुख-दुःख सहने की जितनी सामर्थ्य नारियों में होती है, उतनी पुरुषों में कहाँ ?[३]''

तथा -

''बिना डींग हाँके दुर्भाग्य से लड़ने की जितनी क्षमता नारियों में सहज देखी जाती है, पुरुषों में उसके दर्शन असम्भव नहीं तो दुर्लभ अवश्य हैं।[४]''

इसीप्रकार डॉ. भारिल्ल अनुशासन के बारे में लिखते हैं -

''अनुशासन-प्रशासन हृदय से नहीं, बुद्धि से चलते हैं।[५]''

---

१. सत्य की खोज, पृष्ठ-२४३
२. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ - २९
३. वही, पृष्ठ - ५६
४. वही, पृष्ठ-५६
५. वही, पृष्ठ-१९

''अपराधी को दण्ड देते समय न्यायाधीश को उसके गुणों व उपयोगिता पर ध्यान नहीं देना चाहिए।[१]''

५. कुशल संपादक-

अध्यात्म विद्या का बखान करने वाली पत्रिका 'वीतराग विज्ञान' के आप कुशल संपादक हैं, तथा अनेक ग्रन्थों व पुस्तकों का संपादन आपने किया है, जिसका विवरण इनके 'कर्तृत्व' शीर्षक के अन्तर्गत दिया जायेगा।

६. मनोवैज्ञानिक -

डॉ. भारिल्ल के व्यक्तित्व में मनोवैज्ञानिकता के भी दर्शन होते हैं, वे प्रशंसा के बारे में लिखते हैं-

''प्रशंसा मानव-स्वभाव की एक ऐसी कमजोरी है, जिससे बड़े-बड़े ज्ञानी भी नहीं बच पाते हैं। निन्दा की आँच भी जिसे पिघला नहीं पाती, प्रशंसा की ठंडक उसे छार-छार कर देती है।[२]''

७. दार्शनिक -

डॉ. भारिल्ल एक प्रखर दार्शनिक हैं[३]। वे न केवल जैनदर्शन के मर्मज्ञ विद्वान् हैं, अपितु जैनेतर दर्शनों का भी वे पूर्ण ज्ञान रखते हैं। उन्होंने जैनदर्शन का सांगोपांग रहस्योद्घाटन अपनी कृतियों में किया है। उनकी दार्शनिकता निम्न पंक्ति से स्पष्ट हो जाती है-

''मन्दिर के विकृत हो जाने से उसमें विराजमान देवता विकृत नहीं हो जाते।[४]''

निष्कर्ष -

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल का व्यक्तित्व बहुआयामी और सर्वोन्मुखी है।[५] तीक्ष्ण प्रज्ञा का धारी यह महापुरुष अध्यात्म के प्रचारार्थ अनेक विदेश यात्रायें भी कर चुका है तथा समाज द्वारा विद्यावाचस्पति, वाणीविभूषण, परमागम विशारद, अध्यात्म शिरोमणि, तार्किक शिरोमणि, परमागम चिन्तामणि, महामहोपाध्याय, जैनरत्न - इत्यादि अनेक उपाधियों से विभूषित भी किया जा चुका है।

---

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-१९
२. वही, पृष्ठ-१९
३. जिनवाणी (मासिक) जयपुर, नवम्बर, १९७७
४. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-१५
५. जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) विदिशा, १६ अक्टू., १९७७

कर्त्तृत्व

अध्यात्मदिवाकर डॉ. भारिल्ल के विशाल व्यक्तित्व की तरह उनका कर्त्तृत्व भी विशाल है। उन्होंने हिन्दी साहित्य की अधिकांश विधाओं पर अपनी कलम चलाई है और बहुत ही सरल, सरस व आकर्षक शैली में अभिव्यक्ति दी है। इनकी कृतियों में जहाँ मुख्यत: आध्यात्मिकता का प्राधान्य है, वहीं नैतिक सदाचरण, सहानुभूति व संवेदना, जीवन जीने की कला, कर्तव्यबोध-इत्यादि का दिग्दर्शन होता है। इनके गुरुतर कर्त्तृत्व के ऊपर यहाँ प्रकाश डालेंगे।

(क) गद्य साहित्य -

डॉ. भारिल्ल की लेखनी से प्रसूत गद्य साहित्य करीब ६ हजार पृष्ठों का है; जिसके अंतर्गत कथा साहित्य (कहानियाँ व उपन्यास), विचारात्मक लेख, निबंध साहित्य तथा संस्मरण संनिहित हैं-

गद्य साहित्य में भी अब हम सर्वप्रथम लेखक के कथा साहित्य पर प्रकाश डालते हैं।

१. कथा साहित्य -

इसके अतंर्गत लेखक ने कहानियाँ, उपन्यास व एक नाटक भी लिखा है, सर्वप्रथम हम उनकी कहानियों के बारे में विचार करते हैं -

(१) कहानियाँ -

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल की कहानियाँ **आप कुछ भी कहो** कहानी संग्रह में संकलित हैं, जिनकी संख्या १० है। इसके साथ ही इनकी एक कहानी 'एक केतली गर्म पानी' भी है, जिसमें वर्णित है कि छोटी-छोटी सी बातों को लेकर कितना वितण्डा खड़ा हो जाता है। इस कहानी में बाल-मनोविज्ञान का सुंदर चित्रण है, कि जब बालक की इच्छा पूर्ण नहीं हो पाती है, तो वह किसप्रकार कुण्ठित हो जाता है।

'आप कुछ भी कहो' कहानी संग्रह में संकलित कहानियाँ बहुत ही सशक्त कथानक के रूप में प्रस्तुत हुई हैं, जिनमें कुछ कहानियाँ जैन पुराणों में वर्णित घटनाओं को आधार बनाकर लिखी गई हैं। 'आप कुछ

भी कहो' कहानी संग्रह १० कहानियों का अनुपम संग्रह है। जैनपुराणों में चर्चित प्रेरक कथानकों को कहानी शैली में मौलिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने का अद्वितीय एवं सफल प्रयास इस कृति में दी गई ५ कहानियों के माध्यम से किया गया है।

पौराणिक कथानकों पर आधारित कहानियों में मौलिकता है, अध्यात्म का पुट है।[१] लेखक ने इसमें वादिराज मुनिराज के कोढ़ होने की घटना, रक्षाबन्धन की घटना, भरत चक्रवर्ती का चक्रवर्तित्व के प्रति चिन्तन आदि घटनाओं पर अध्यात्म गर्भित मौलिक चिन्तन रोचक शैली में प्रस्तुत किया है।

कुछ कहानियाँ सामाजिक हैं; जो समाज को सही दिशा देती हैं। इसतरह कुछ कहानियाँ धार्मिक, कुछ सामाजिक और कुछ पारिवारिक हैं।

सभी कहानियों में आध्यात्मिक सुरभि तो मिलती ही है।[२]

(२) उपन्यास-

डॉ. भारिल्ल का एकमात्र उपन्यास 'सत्य की खोज' अत्यंत सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान करने वाला उपन्यास है। इसमें उपन्यास की रूढ़िग्रस्त नायिका रूपमती एवं तर्कप्रधान नायक विवेक के माध्यम से धर्म के नाम पर समाज में प्रचलित कुरीतियों, रूढ़ियों, अंधविश्वासों, पाखण्डों, मिथ्या तंत्र-मंत्र, ढोंगी साधु-महात्माओं तथा धर्म के विकृत स्वरूप पर तीखा प्रहार करते हुए जैनदर्शन के प्रमुख सिद्धान्तों का सरल-सुगम और सहज विवेचन किया गया है।

इस कृति में सत्य एवं संगठन की सुरक्षा के कठिन दायित्व का निर्वाह करने का मार्ग बताते हुए लेखक ने गम्भीर सूझ-बूझ का परिचय दिया है। अंधविश्वासों व रूढ़ियों को मिटाने की रीति-नीति स्पष्ट करते हुए अध्यात्म के साथ-साथ सामाजिक संगठन कायम रखने की कला प्रतिपादित कर लेखक ने सामाजिक एकता के लिए अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत किया है।[३]

१. वीरवाणी (पाक्षिक) जयपुर, अप्रैल, १९८४, अंक-१३
२. जैनमित्र (साप्ताहिक) सूरत, ५ अप्रैल, १९८४
३. सन्मति सन्देश (मासिक) दिल्ली, फरवरी, १९७८

'श्रद्धा का लुटेरा सबसे बड़ा लुटेरा होता है[१]' - इत्यादि मौलिक नीति वाक्यों का प्रयोग अत्यंत प्रेरणास्पद है।

गुरु गोपालदासजी बरैया द्वारा लिखिल सुशीला उपन्यास के बाद आध्यात्मिक जैन उपन्यास साहित्य में सम्भवत: यह सर्वप्रथम रचना है।

(३) नाटक-

नाटक साहित्य के अंतर्गत प्रमुख विवेचनीय एकमात्र नाटक 'गरीब की दीपावली' डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित है, जिसमें गरीबों, पूँजीहीनों की समस्याओं व उनकी परिस्थितियों का जीवंत चित्रण देखने को मिलता है। २२-२३ वर्ष की उम्र में लेखक द्वारा लिखे गये प्रस्तुत नाटक का मंचन स्वयं लेखक ने अपने पैतृक गाँव बरौदास्वामी में किया था; जिसमें डॉ. भारिल्ल एवं इनके बड़े भाई जैन साहित्यकार पंडित रतनचन्द भारिल्ल ने प्रमुख पात्र के रूप में अभिनय किया था।

२. निबंध साहित्य -

डॉ. भारिल्ल का निबंध साहित्य भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है, इन्होंने अपने निबंधों में आध्यात्मिकता, दार्शनिकता, धार्मिकता, मनोवैज्ञानिकता-इत्यादि का अच्छा विश्लेषण किया है।

इनके प्रमुख निबंध साहित्य का विवेचन इसप्रकार है-

(१) धर्म के दशलक्षण-

प्रस्तुत रचना में डॉ. भारिल्ल द्वारा धर्म के दश लक्षणों का सुन्दर विवेचन किया गया है; जिसमें उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिञ्चन तथा ब्रह्मचर्य के बारे में आगम के परिप्रेक्ष्य में और तर्क और युक्ति की कसौटी पर मार्मिक विवेचन किया गया है, इसके साथ ही क्षमावाणी पर्व के ऊपर भी निबंध लिखा है।[२]

(२) शाकाहार -

प्रस्तुत कृति में लेखक ने शाकाहार के बारे में सांगोपांग वर्णन किया है। यदि कोई व्यक्ति इस कृति का गहराई से अध्ययन करे, समागत

१. सत्य की खोज, पृष्ठ-५७

२. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ), सप्तम खण्ड, पृष्ठ-५७

विषय पर विचार करे, चिन्तन करे तो सच्चा शाकाहारी हुए बिना नहीं रहेगा।

(३) मैं कौन हूँ-

इस कृति में डॉ. भारिल्ल ने जीवतत्त्व का सुन्दर विवेचन किया है। इसमें जोर देकर कहा गया है कि हम विचार करें कि मैं कौन हूँ, मेरा क्या स्वरूप है और मुझे कहाँ जाना है। इसप्रकार यह अत्यन्त प्रेरक दार्शनिक निबंध के रूप में श्रेष्ठ आध्यात्मिक निबंध है।

(४) अहिंसा : महावीर की दृष्टि में -

इस कृति में महावीर भगवान द्वारा उपदेशित अहिंसा का बहुत ही मार्मिक सूक्ष्म और हृदयग्राही विवेचन है, अहिंसा को गहराई से व्याख्यायित करने वाला यह एकमात्र अनुपम निबंध है।

३. निबंधेतर गद्य साहित्य -

इसके अंतर्गत डॉ. भारिल्ल के द्वारा विभिन्न विषयों पर लिखित छोटी-बड़ी पुस्तकों को देख सकते हैं, उनका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है-

(१) तीर्थंकर भगवान महावीर -

इसमें तीर्थंकर भगवान महावीर के जीवन और सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय अत्यन्त रोचक और अनूठी शैली में दिया गया है।

(२) तीर्थंकर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ -

इस कृति में महावीर के जीवन और सिद्धान्तों का विवेचन तो है ही परन्तु जिनागम के सिद्धान्तों की मौलिक व्याख्या इसकी प्रमुख विशेषता है।

(३) वीतरागी व्यक्तित्व : भगवान महावीर-

इस कृति में भगवान महावीर के वीतरागी स्वरूप पर मार्मिक एवं भाववाही प्रकाश डाला गया है।

(४) क्रमबद्धपर्याय -

डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित यह एक दार्शनिक ग्रन्थ है। इसमें लेखक ने आगम के आधार पर सर्वज्ञता, क्रमबद्ध परिणमन, पुरुषार्थ आदि पाँच समवाय - इत्यादि जैन दार्शनिक विषयों का विवेचन सरल और तर्कसंगत

भाषा में किया है।[१] प्रस्तुत कृति के बारे में जैन आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी ने कहा था कि- **''यह कृति जीवन बदल देनेवाली क्रान्तिकारी कृति है, जो पाठकों को इस विषय पर गम्भीरता से सोचने को बाध्य करती है।''**

(५) बालबोध पाठमाला भाग-२ और ३-

बालकों को नैतिक और सदाचार की शिक्षा देने वाले ये भाग चारों अनुयोगों से संबंधित हैं, और इनकी जानकारी संवाद एवं निबन्ध शैली में लिखे गए पाठों के माध्यम से दी गई है। समाज में प्रचलित अन्य पाठ्य-पुस्तकों से भिन्न शैली एवं मूल तत्त्वज्ञान का समावेश इन पाठ्य पुस्तकों की विशिष्ट पहिचान है।

(६) बारह भावना: एक अनुशीलन -

बारह भावना जैन अध्यात्म का महत्त्वपूर्ण विषय है। यद्यपि इससे पहले भी अनेक कवियों ने बारह भावनाएँ लिखी हैं; परन्तु डॉ. भारिल्ल ने पद्य रचना के साथ ही गद्य में भी बारह भावनाओं का विश्लेषण नये ढंग से अथवा कहें तो लीक से हटकर किया है; जो मूलत: पठनीय है।

(७) शाश्वत तीर्थराज सम्मेदशिखर -

सम्पूर्ण जैन समाज में तीर्थराज सम्मेदशिखर के प्रति अगाध श्रद्धा और गहन आस्था है। लेखक ने इसमें आध्यात्मिक और सामाजिक एकता की दृष्टि से तीर्थराज की महिमा का रोमांचक वर्णन किया है और अनेक नूतन तथ्यों का उद्घाटन किया है; जो मूलत: पठनीय है।

(८) चैतन्य चमत्कार-

इस कृति में जैन आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी से इन्टरव्यू लेकर समाज में उनके बारे में फैली भ्रान्तियों का निराकरण किया है। साथ ही, क्रमबद्धपर्याय, दिगम्बर मुनिदशा - इत्यादि के बारे में स्वामीजी का चिन्तन प्रस्तुत किया गया है।

(९) निमित्तोपादान -

यह दर्शन और अध्यात्म से समन्वित अनूठी कृति है। वस्तु की व्यवस्था से सम्बन्धित यह विषय आत्मकल्याण की दृष्टि से नितान्त

१. सन्मति सन्देश (मासिक), नई दिल्ली, १९७७

उपयोगी है। लेखक ने इस पुस्तक में आगम के आधार से उपादान-निमित्त का गम्भीर विवेचन किया है । आगम के आलोक में निमित्त की उपस्थिति अनिवार्य होते हुए भी कार्योत्पत्ति में तत्समय की योग्यता को नियामक कारण प्रतिपादित किया गया है। उपादान के तीन भेद और कार्योत्पत्ति में उनके योगदान की चर्चा करके निमित्ताधीन दृष्टि को दूर करने की बात कही गई है।

(१०) आत्मा ही है शरण-

इस कृति का मूल प्रतिपाद्य है कि प्रत्येक प्राणी को उसकी निज आत्मा ही शरणभूत है, अन्य कोई पर पदार्थ नहीं। डॉ. भारिल्ल आध्यात्मिक व्याख्यान देने के लिए प्रतिवर्ष अमेरिका एवं यूरोप के अनेक शहरों में तथा जापान आदि में जाते हैं और वहाँ रहनेवाले जिज्ञासुओं को जैनधर्म के गूढ़ रहस्यों का परिचय कराते हैं। वस्तुस्वातन्त्र्य, क्रमबद्धपर्याय, निश्चय-व्यवहार जैसे गहन तात्विक विषयों पर जो प्रवचन उन्होंने वहाँ दिए, उन्हीं का संकलन इस कृति में किया गया है।

(११) परमभावप्रकाशक नयचक्र -

जिनागम की महत्त्वपूर्ण प्रतिपादन शैली नयों का सांगोपांग एवं विस्तृत विवेचन करनेवाली यह कृति डॉ. भारिल्ल के साहित्य में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। जिनागम में उपलब्ध प्राय: सभी नयों की परिभाषा, प्रयोग, भेद-प्रभेद एवं उपयोगिता को एक ही कृति में स्पष्ट करनेवाला इतना सफलतम प्रयास अन्यत्र दुर्लभ है।[१]

(१२) गोम्मटेश्वर बाहुबली -

तीर्थराज सम्मेदशिखर की भाँति ही श्रवणबेलगोला (कर्नाटक) में स्थित गोम्मटेश्वर बाहुबली भी जन-जन की आस्था और भक्ति का स्रोत है, इसलिए भगवान बाहुबली का चित्रण इसमें किया गया है। इसमें भगवान बनने से पूर्व हुए बाहुबली और भरत चक्रवर्ती के युद्ध का विवेचन भी परम्परागत चिन्तन से हटकर नवीन दृष्टि से किया गया है तथा बाहुबली के वैराग्य का सुन्दर वर्णन किया गया है।

१. अनेकान्त (त्रैमासिक शोध पत्रिका) नई दिल्ली, अप्रैल-जून, १९८२

(१३) गागर में सागर –

डॉ. भारिल्ल ने अपनी इस कृति में भी तारणस्वामी विरचित 'ज्ञान समुच्चयसार' की गाथाओं को आधार बनाकर आध्यात्मिक चेतना के स्वर अभिव्यक्त किए हैं।

(१४) पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव –

इस कृति में इस महोत्सव को लेखक ने जैनदर्शन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं गरिमामय अनुष्ठान निरूपित किया है। नवीन मन्दिर निर्माण, प्रतिष्ठा महोत्सवों का आयोजन – इत्यादि सामाजिक विषयों का व्यावहारिक एवं संतुलित विवेचन करते हुए इन महोत्सवों को असल की असल नकल निरूपित करते हुए इनकी गरिमा बनाए रखने के लिए सभी पक्षों को सावधान किया है। प्रत्येक कल्याणक की उपयोगिता और महत्ता पर मौलिक चिन्तन प्रस्तुत किया गया है। अन्त में इन महोत्सवों से क्या प्रेरणा लेनी चाहिए – इस बिन्दु पर मार्मिक प्रकाश डाला गया है।

(१५) दृष्टि का विषय

इस कृति में दृष्टि के विषयभूत भगवान आत्मा का स्वरूप स्पष्ट किया गया है। जिसको अपना मानने का नाम सम्यग्दर्शन है, जिसे निजरूप जानने का नाम सम्यग्ज्ञान है और जिसमें जमने–रमने का नाम सक्यक्चारित्र है, पर और पर्याय से भिन्न वह भगवान आत्मा ही दृष्टि का विषय है। इसका स्वरूप ही इस कृति में स्पष्ट किया गया है।

(१६) युगपुरुष श्रीकानजीस्वामी –

यह कृति आध्यात्मिकसत्पुरुष कानजीस्वामी जो कि जैन अध्यात्म के अनूठे प्रतिपादक थे, उनके लिए समर्पित कृति है। इसमें उनके आकर्षक व्यक्तित्व, अद्‌भुत प्रवचन शैली एवं उनके द्वारा प्रतिपादित मार्मिक सिद्धान्तों की सम्यक् विवेचना की गई है।

(१७) पण्डित टोडरमल व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व–

पण्डितप्रवर टोडरमल के व्यक्तित्व और उनकी रचनाओं पर लिखा गया यह अनुपम शोध प्रबन्ध है। इसमें पण्डित टोडरमलजी की गद्य शैली, दार्शनिक विचार और जिनागम की तलस्पर्शी प्रज्ञा का विस्तृत

विवेचन किया गया है। मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ की विस्तृत समीक्षा इस शोधप्रबन्ध की महत्त्वपूर्ण विशेषता है।

(१८) वीतराग विज्ञान प्रशिक्षण निर्देशिका-

जैनदर्शन की शिक्षा देने हेतु कुशल अध्यापनकला सिखानेवाली यह अद्‌भुत क्रान्तिकारी पुस्तक है, इससे पूर्व जैनधर्म की शिक्षा के लिए ऐसा गम्भीर और वैज्ञानिक प्रयोग कभी नहीं हुआ। लौकिक शिक्षा की शिक्षा प्रदान करनेवाले शिक्षकों को प्रशिक्षित करने की तरह जैनधर्म की शिक्षा प्रदान करनेवाले शिक्षकों के लिए यह निर्देशिका तैयार की गई है।

(१९) आचार्य कुन्दकुन्द और उनके पंच परमागम -

डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित इस कृति में पंच परमागमों के मार्मिक बिन्दुओं का स्पर्श करते हुए इनका सार संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसकी रचना 'कुन्दकुन्द वर्ष' के उपलक्ष्य में की गई थी।

(२०) समयसार अनुशीलन -

आचार्य कुन्दकुन्द के अनुपम ग्रन्थराज समयसार की अनेक टीकाओं, भाष्यों को आधार बनाकर, सम्पूर्ण बिन्दुओं को लेकर समयसार की विषयवस्तु का पाँच खण्डों और बाईस सौ पृष्ठों में अनुशीलन किया गया है।

(२१) अन्य कृतियाँ-

उपर्युक्त कृतियों के अतिरिक्त चिन्तन की गहराइयाँ, सूक्ति सुधा, बिखरे मोती, मैं स्वयं भगवान हूँ, णमोकार महामंत्र : एक अनुशीलन, बिन्दु में सिन्धु, गोली का जवाब गाली से भी नहीं, रीति-नीति - इत्यादि अन्य कृतियाँ भी डॉ. भारिल्ल की हैं। इसके साथ ही इनकी कुछ अप्रकाशित गद्य रचनाएँ भी हैं, जैसे - ये हैं मेरी नारियाँ, ये हैं मेरी परमपूज्य माताएँ। इसके साथ ही - प्रेम क्या है? उद्धार, अभिमान, मेरा साम्राज्य, तथा सुख कहाँ और भारत की भावात्मक एकता - इत्यादि रचनाओं से लेखक का गाम्भीर्य चिन्तन स्पष्ट होता है।

(२२) संस्मरण साहित्य (अप्रकाशित)-

अतीत की स्मृतियाँ नाम से डॉ. भारिल्ल ने अपने जीवन की विविध घटनाओं पर आधारित संस्मरण लिखे हैं। इन संस्मरणों की प्रमुख विशेषता यह है कि इन्होंने संस्मरण लिखने के लिए संस्मरण नहीं

लिखे परंतु उन संस्मरणों के माध्यम से जैनदर्शन के विविध सिद्धान्तों और अध्यात्म तथा दर्शन का विवेचन किया है। यह संस्मरण अभी अप्रकाशित हैं, और जल्द ही प्रकाशित होनेवाले हैं।

इसतरह डॉ. भारिल्ल का विशाल गद्य साहित्य हिन्दी साहित्य को अत्यधिक समृद्ध करता है, इनका गद्य साहित्य प्रभूत मात्रा में जनोपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

(ख) पद्य साहित्य -

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल ने गद्य साहित्य की तरह पद्य साहित्य का भी प्रचुर मात्रा में सृजन किया है। पद्य साहित्य के अंतर्गत इन्होंने एक महाकाव्य, एक खण्डकाव्य तथा मुक्तक छन्दों के रूप में, स्तुति साहित्य के रूप में एवं पूजन साहित्य के रूप में भी पद्य साहित्य का निर्माण किया है। पद्य साहित्य के अंतर्गत समागत इनके साहित्य का विवेचन निम्नप्रकार से कर सकते हैं-

(१) महाकाव्य -

जैनदर्शन में वर्णित कथानक के अनुसार नेमिकुमार और राजुल को आधार बनाकर १३ सर्गों में महाकाव्य (अपूर्ण एवं अप्रकाशित) लिखा गया है, इसमें राजुल के विरह का सुन्दर विवेचन है।

(२) खण्डकाव्य-

डॉ. भारिल्ल का एकमात्र खण्डकाव्य (अप्रकाशित) 'पश्चात्ताप' है, इसका कथानक सीता-वनगमन को आधार लेकर बनाया गया है, जिसमें लेखक का नारी के प्रति सुधारवादी दृष्टिकोण प्रकट होता है, यथा-

"प्रजा की सुनकर करुण पुकार, किया यदि रामचन्द्र ने न्याय।
किन्तु सीता देवी के साथ, हुआ अन्याय, महा अन्याय॥[१]"

उक्त खण्डकाव्य मात्र १९ वर्ष की अल्पायु में लिखी गई- लेखक की प्रथम रचना है, जो लेखक की प्रौढ़ मति का संकेत देती है।

(३) अन्य लघु रचनाएँ -

इसके अंतर्गत डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित स्तुति साहित्य, पूजन साहित्य -इत्यादि का विवेचन किया जा सकता है, जैसे-

१. पश्चात्ताप, खण्डकाव्य : डॉ. भारिल्ल

(१) महावीर वन्दना -

तीर्थंकर भगवान महावीर के वीतरागी व्यक्तित्व, सर्वज्ञता, हितोपदेशित्व एवं प्रमुख सिद्धान्तों को प्रतिबिम्बित करनेवाला यह मधुर आध्यात्मिक स्तवन है। आचार्य समन्तभद्र की अनुपम स्तुति शैली से प्रेरित होकर लिखा गया यह काव्यात्मक स्तवन स्तुति साहित्य में मील का पत्थर है। इससे परवर्ती नवोदित कवियों को अध्यात्मरस से भरपूर काव्यरचना की प्रेरणा मिलती रहेगी।

(२) जिनेन्द्रवन्दना और बारह भावना -

मुक्ति की जननी आनन्द और वैराग्यवर्धिनी बारह भावनाएँ स्व और पर का भेदविज्ञान कराती हैं, वीतरागी चारित्र का बीजारोपण करती हैं; जिन्हें डॉ. भारिल्ल ने भी पूर्व कवियों का अनुसरण करते हुए परन्तु लीक के हटकर नये आयाम के रूप में प्रस्तुत किया, उनकी रचना की है। इसके साथ ही डॉ. भारिल्ल ने जिनेन्द्र वन्दना स्वरूप जैनदर्शन के २४ तीर्थंकरों की स्तुति की है। इस स्तुति में उन्होंने एकदम नवीन प्रयोगात्मक दृष्टिकोण अपनाते हुए २६ छन्दों की रचना में श्रेष्ठ भक्तिकाव्य की रचना की है। इसमें एक-एक तीर्थंकर को एक-एक परिग्रह से रहित निरूपित करते हुए चौबीस परिग्रहों से रहित चौबीस तीर्थंकरों की यह मनमोहक स्तुति, भक्ति साहित्य की अनुपम निधि है।

(३) देव-शास्त्र-गुरु पूजन -

पूजन में जल-फलादि अष्ट द्रव्य चढ़ाने के सम्बन्ध में आध्यात्मिक प्रयोजन को अभिव्यक्त करनेवाले छन्दों की रचना इस पूजन में कर डॉ. भारिल्ल का अपना विशिष्ट वैशिष्ट्य प्रकट होता है।

(४) सीमन्धर पूजन-

कलापक्ष और भावपक्ष- इन दोनों दृष्टियों से उत्कृष्ट पूजनों में यह पूजन अपना विशिष्ट स्थान रखती है। इसके रूपक इत्यादि अलंकारों के सहज और मधुर प्रयोग पर काव्यरसिकजन रीझ उठते हैं। जल-फलादि द्रव्यों को स्थापित करके उन्हें ही सर्वोत्तम जल-चन्दनादि निरूपित किया गया है- ऐसा सुन्दर और मौलिक प्रयोग अन्यत्र दुर्लभ है। भाषा का

लालित्य और भावों की उत्कृष्टता से सुसज्जित यह पूजन, जिनेन्द्र-पूजन का अनुपम और अद्वितीय आनन्द प्रदान करती है।

(५) सिद्ध पूजन

भारिल्लजी द्वारा लिखित यह भी एक अनुपम पूजन है। इस पूजन के अष्टकों के छन्दों में परम्परा से हटकर एक नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है, इन्होंने न्यायशास्त्र के आधार से पूजन लिखने की परम्परा का विकास किया है। भक्ति, अध्यात्म और सिद्धान्त इन तीनों की त्रिवेणी रूप पूजन काव्य अत्यंत रमणीय है। पूजन की जयमाला में जीवादि सात तत्त्वों के संबंध में होनेवाली भूलों की चर्चा करके आचार्य समन्तभद्र द्वारा स्थापित स्तुति शैली को प्रोत्साहित किया है।[१]

(६) महावीर पूजन-

जैनधर्म के अप्रतिम सूर्य तीर्थंकर भगवान महावीर की आराधना स्वरूप रचित यह पूजन काव्य कृति भी पूजन साहित्य की अनमोल धरोहर और निधि है। इसमें अष्ट द्रव्यों के माध्यम से भगवान महावीर की मधुर स्तुति की गई है, साथ ही जयमाला में लौकिक सुख की अभिलाषा रखने वालों पर करारा प्रहार किया गया है- निष्कर्षतः संपूर्ण पूजन मौलिक भक्तिभाव से भरपूर है।

(७) मैं ज्ञानानंद स्वभावी हूँ -

यह जैन अध्यात्म को मुखरित करनेवाली अत्यंत मार्मिक रचना है

इसप्रकार से डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल ने अपने पद्य साहित्य में अनुभूति की प्रवणता, भक्तिभाव की विभोरता को ग्रहण करते हुए कमनीय कलेवर वाली भाषा का प्रयोग करके मार्मिक काव्य रचना प्रस्तुत की है।

(ग) अनूदित पद्य साहित्य -

डॉ. भारिल्ल का अनूदित पद्य साहित्य भी विपुल है। चूँकि डॉ. भारिल्ल संस्कृत एवं प्राकृत भाषा के भी उत्कट विद्वान् हैं; अतः उन्होंने संस्कृत और प्राकृत काव्यग्रन्थों का हिन्दी में पद्यानुवाद किया है। इनके

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) सप्तम खण्ड, पृष्ठ-६५

द्वारा सरल, सरस और आकर्षक भाषा में किए गए अनूदित साहित्य का विवेचन इसप्रकार है-

(१) समयसार पद्यानुवाद -

जैनियों की गीता के नाम से अभिहित जैनदर्शन का सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक ग्रन्थ समयसार जो कि प्राकृत भाषा में सर्वश्रेष्ठ दिगम्बर आचार्य कुन्दकुन्ददेव द्वारा विरचित है - ऐसे ग्रन्थाधिराज समयसार की सम्पूर्ण ४१५ गाथाओं का माधुर्यगुणयुक्त अत्यंत सरलभाषा में सुन्दर हिन्दी पद्यानुवाद डॉ. भारिल्ल के द्वारा किया गया है। गाथा का मूलभाव अत्यंत सरलता से व्यक्त करना- इस पद्यानुवाद की विशेषता है।[१]

(२) अष्टपाहुड़ पद्यानुवाद -

आचार्य कुन्दकुन्द विरचित प्राकृत भाषा के इस ग्रन्थ का हिन्दी पद्यानुवाद अत्यन्त सरल और मार्मिक तरीके से किया गया है।

(३) समयसार कलश पद्यानुवाद -

संस्कृत के उद्भट विद्वान् और जैनाचार्य अमृतचन्द्र ने समयसार ग्रन्थ की आत्मख्याति नामक संस्कृत टीका में २७८ श्लोक लिखे हैं, जिन्हें कलश कहते हैं। इन श्लोकों का हिन्दी पद्यानुवाद भी डॉ. भारिल्ल ने किया है।

(४) द्रव्यसंग्रह पद्यानुवाद -

आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तिदेव विरचित प्राकृत भाषा के ग्रन्थ 'द्रव्यसंग्रह' का सुमधुर, सरल हिन्दी पद्यानुवाद भी डॉ.भारिल्ल ने किया है।

(५) योगसार पद्यानुवाद -

अपभ्रंश भाषा के कवि और विद्वान् तथा जैनाचार्य योगीन्दु द्वारा विरचित योगसार नामक ग्रन्थ का हिन्दी पद्यानुवाद भी डॉ. भारिल्ल ने किया है। अध्यात्मरसिकों को अध्यात्मरस का पान करानेवाली यह अनुपम काव्य कृति है।

(६) कुन्दकुन्द शतक -

इस कृति में 'कुन्दकुन्द वर्ष' के अवसर पर जैनाचार्य कुन्दकुन्द का मूल सन्देश जन-जन तक पहुँचाने हेतु आचार्य कुन्दकुन्द के पाँचों परमागमों

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ), सप्तम खण्ड, पृष्ठ-६४

की १०१ गाथाएँ चुनकर उनका सरल और सुन्दर पद्यानुवाद डॉ. भारिल्ल ने किया है। इस कृति की यह विशेषता है कि अध्यात्म, सिद्धान्त, आचरण - इत्यादि से संबंधित कुछ चुनिन्दा विषय इसमें संकलित हैं, मात्र १०१ गाथाओं के माध्यम से कुन्दकुन्द के समग्र दर्शन को प्रतिबिम्बित करने का यह अनूठा उदाहरण है।'

(७) शुद्धात्म शतक-

इस कृति में शुद्धात्मा के स्वरूप का प्रतिपादन करनेवाली आचार्य कुन्दकुन्द के ग्रन्थों से चयनित गाथाओं का पद्यानुवाद डॉ. भारिल्ल ने किया है, जिसमें प्राकृत की मूल गाथाओं का मूलभाव सरल तरीके से अभिव्यक्त होता है।

(घ) सम्पादित साहित्य -

डॉ. भारिल्ल ने अनेक ग्रन्थों का सुयोग्य एवं कुशल संपादन भी किया है, उन्होंने न केवल नूतन साहित्य की सर्जना की है अपितु प्राचीन जैन साहित्य को सुव्यवस्थित कर सम्पादित भी किया है, जिसको हम निम्नप्रकार से देख सकते हैं -

(१) मोक्षमार्ग प्रकाशक -

पंडितप्रवर टोडरमलजी द्वारा विरचित मोक्षमार्ग प्रकाशक ग्रन्थ जो कि ढूंढारी भाषा में लिखा गया था, उसका सफल संपादन भी आपने किया है। जैनदर्शन को सूक्ष्मरूप से सरल और तार्किक रूप से व्याख्यायित करनेवाले इस अनुपम और अपूर्व ग्रन्थ का संपादन डॉ. भारिल्ल ने किया है।

(2) प्रवचनरत्नाकर-

जैन आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजी स्वामी द्वारा जैनदर्शन के ऊपर दिए गये व्याख्यानों के संकलन रूप इस कृति का संपादन भी डॉ. भारिल्ल ने किया है।

(ङ) इसके अतिरिक्त आपने अनेक ग्रन्थों की महत्त्वपूर्ण विस्तृत प्रस्तावनाएँ भी लिखी हैं; जिनमें, समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, अष्टपाहुड़, मोक्षमार्गप्रकाशक एवं रत्नकरण्डश्रावकाचार आदि प्रमुख हैं।

❖ ❖ ❖

द्वितीय अध्याय

उपन्यास के निकष पर समीक्षात्मक परिशीलन

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल द्वारा लिखित उपन्यास 'सत्य की खोज' निस्संदेह औपन्यासिक तत्त्वों की कसौटी पर एकदम खरा उतरता है। यद्यपि यह उपन्यास जैनदर्शन के मौलिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन तो करता ही है; परन्तु प्रमुख रूप से यह उपन्यास अन्धविश्वासों, रूढ़ियों, आडम्बरों एवं ढोंगी साधु-महात्माओं तथा मिथ्या परंपराओं का भंजक है, उन पर कुठाराघात करनेवाला है।[१]

यद्यपि जैन साहित्य में उपन्यास विधा एकदम नवीन नहीं है; क्योंकि प्राचीन काल से ही यह विधा पुराणों के रूप में विद्यमान रही है, लेकिन जैनदर्शन के मौलिक सिद्धान्तों को सरस, सरल और रोचक शैली में प्रस्तुत करनेवाले उपन्यासों का अभाव रहा है। अत: डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित औपन्यासिक रचना 'सत्य की खोज' जैन उपन्यास विधा में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। तथा यह उपन्यास के सभी औपन्यासिक तत्त्वों की कसौटी पर खरा उतरने वाला उपन्यास है।

वस्तुत: किसी भी उपन्यास की अपार सफलता या लोकप्रियता इस तथ्य पर आश्रित होती है कि वह पाठकों को किस सीमा तक बाँधे रख सकता है। इसके लिए यह परमावश्यक है कि उसकी अन्त:बाह्य संरचना सुगठित हो। वस्तुत: एक श्रेष्ठ उपन्यास वही हो सकता है, जिसमें कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, भाषा-शैली और उद्देश्य - इन छह तत्त्वों का समावेश व्यवस्थित तरीके से दृष्टिगोचर होता हो। उक्त छह तत्त्वों के आधार पर इस उपन्यास का परिशीलन किया जा रहा है, समीक्षा की जा रही है।

1. उपन्यास की कथावस्तु -

वस्तुत: किसी भी कथासाहित्य की रीढ़ या आधारस्तम्भ उसकी कथावस्तु होती है; क्योंकि कथावस्तु की नींव पर ही कथासाहित्य की

---

१. सन्मति सन्देश (मासिक) दिल्ली, फरवरी, १९७८

प्रत्येक विधा खड़ी होती है।[१] उपन्यास और कहानियों में कथावस्तु प्रमुख तत्त्व के रूप में नियोजित होता है।

डॉ. त्रिगुणायत ने उपन्यास के विभिन्न तत्त्वों पर विचार करते हुए उपन्यास की कथा को उपन्यास का प्राण कहा है।[२] इसीप्रकार से डॉ. लक्ष्मीकान्त सिन्हा ने भी कहा है कि उपन्यास की बनावट पर विचार करते समय सबसे पहले जिस तत्त्व की ओर हमारा ध्यान जाता है, ------। अत: इतना तो स्पष्ट ही है कि कथावस्तु पर ही उपन्यास की बड़ी इमारत ठहरती है। केवल प्राचीन दृष्टिकोण से ही नहीं, आज भी उपन्यास के लिए इस तत्त्व को महत्त्वपूर्ण माना जाता है।[३]

डॉ. भागीरथ मिश्र ने उपन्यास के इस तत्त्व के महत्त्व पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए लिखा है- ''यद्यपि आधुनिक काल में कथानक का महत्त्व कम समझा जाता है, पर यह उपन्यास का मूल है। उपन्यास में व्याप्त कुतूहल का तत्त्व कथानक के सहारे ही विकास पाता है।[४]

श्री पदुमलाल पुन्नालाल बक्शी[५] श्री श्याममोहन जोशी[६] तथा आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी[७] ने भी अन्य तत्त्वों की अपेक्षा कथातत्त्व का महत्त्व सर्वोपरि स्वीकार किया है। डॉ. प्रतापनारायण ने कथावस्तु तत्त्व की प्रधानता का कारण बतलाते हुए लिखा है-''वास्तव में उपन्यास के तत्त्वों में कथानक की प्रधानता का कारण यही है कि इसके अभाव में न केवल उपन्यास की रचना हो सकती है, बल्कि उपन्यास एक कथाकृति ही नहीं बन सकता।[८]

किन्तु विद्वानों का एक दूसरा वर्ग भी है, जो कथानक को आवश्यक नहीं मानता है। उनका कहना है कि -''उपन्यास में कथावस्तु अनावश्यक

१. डॉ. प्रतापनारायण टंडन : हिन्दी साहित्य में कथा-शिल्प का विकास, पृष्ठ-७५
२. डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत : शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त (दूसरा भाग), पृष्ठ-४१६
३. डॉ. लक्ष्मीकांत सिन्हा : हिन्दीं उपन्यास साहित्य का उद्‌भव और विकास, पृष्ठ-३८
४. डॉ. भागीरथ मिश्र : काव्यशास्त्र, पृष्ठ-८३
५. पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी : साहित्य परिचय, पृष्ठ-९२
६. श्री श्याम मोहन जोशी : उपन्यास सिद्धान्त, पृष्ठ-९१
७. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी : साहित्य का साथी, पृष्ठ-८२
८. डॉ. प्रतापनारायण टंडन : हिन्दी उपन्यास में कथा -शिल्प का विकास पृष्ठ-११०

है। हमारे जीवन का संचालन किसी पूर्व निश्चित योजना से होता नहीं, फिर उपन्यास में जो जीवन का प्रतिरूप भाव है- इस विशिष्ट योजना अथवा वस्तु की आवश्यकता ही क्या है?''

इसप्रकार से विवेच्य चाहे जो भी हो, अगर उसके आधार पर उपन्यास लिखा जायेगा तो उसके लिए क्षीण कथासूत्र ही क्यों न हो- उसे आधार बनाकर चलना ही होगा; क्योंकि कथा का सर्वथा अभाव उसे उपन्यास नहीं होने देगा, चाहे वह कुछ और ही क्यों न हो जाए। हाँ कथानक प्रमुख तत्त्व होगा या गौण - यह विचार की बात अलग है।

किसी भी उपन्यास की रीढ़ उसकी कथावस्तु होती है। उपन्यासकार अपने उद्देश्य की सम्पूर्ति हेतु कथावस्तु का संयोजन करता है। उपन्यास का विषय ऐतिहासिक, सामाजिक या अन्य किसी भी प्रकार का हो सकता है। परन्तु उसमें स्वाभाविकता-गतिशीलता-विश्वसनीयता, अनिवार्य है। **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी** ने लिखा है कि - ''कोई उपन्यास सफल है या नहीं - इस बात की प्रथम कसौटी यह है कि कहानी कहने वाले ने कहानी ठीक-ठीक सुनाई है या नहीं। इसतरह से उपन्यासकार द्वारा उपन्यास में प्रस्तुत की गई कथावस्तु की सफलता इसी में निहित है कि उस कथानक में कोई व्यवधान न हो, बेमेल घटनाओं का संयोजन न हो; एकसूत्रता तथा यथार्थता की पृष्ठभूमि पर कथानक आधारित हो; क्योंकि कथानक में कल्पनाओं की अतिशयता या अतिरेकता एक सफल उपन्यास की सफल कथावस्तु कभी नहीं हो सकती है।''

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास 'सत्य की खोज' की कथावस्तु -

प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु लेखक की कल्पनाप्रसूत है। उपन्यास का कथानक यद्यपि संक्षिप्त है; परन्तु मार्मिक, चित्ताकर्षक और यथार्थ की पृष्ठभूमि पर आधारित है। उपन्यास का कथानक इसप्रकार है-

'सेठ अर्हत्दास एवं उनकी पत्नी जिनमती का एकमात्र पुत्र विवेक बचपन से सुसंस्कारवान, श्रेष्ठ आचरणवाला, बुद्धिमान, तार्किक एवं अंधविश्वासों और रूढ़ियों तथा आडम्बरों का विरोधी है। युवा होने पर शादी के लिए अनेक धनवान परिवारों की लड़कियों के साथ शादी के

प्रस्ताव आए; परन्तु उपन्यास के नायक विवेक ने बहुत से दहेज को ठुकराकर एक मध्यमवर्गीय कन्या रूपमती के साथ विवाह अत्यंत सादगीपूर्ण तरीके से किया।

लेखक के शब्दों में-"विवेककुमार को यह सब पसन्द न था। वह नहीं चाहता था कि उसकी शादी के नाम पर व्यर्थ का आडम्बर और बर्बादी की जाए। वह यह भी नहीं चाहता था कि लड़की के पिता पर व्यर्थ ही बलात् आर्थिक बोझ डाला जाए।[१]"

विवेक की पत्नी रूपमती अंधश्रद्धालु थी, वह ढोंगी साधु-महात्माओं के कपोल-कल्पित चमत्कारों से अत्यंत प्रभावित थी। मूल कथानक इसी पर आधारित है। विवेक अपने तर्कों, विविध प्रकार की युक्तियों तथा उसके सामने ही पाखण्डी साधुओं तथा अंधविश्वासों का भंडाफोड़ कर रूपमती को सही रास्ते पर ले आता है, इसके बाद सैद्धान्तिक बातों को लेकर समाज में फैले भयावह विवाद का चित्रण और अंत में विवेक द्वारा शांति और सत्य के रास्ते से उन पर विजय प्राप्त करके समाज के सम्मुख एक आदर्श प्रस्तुत किया गया है, इसतरह से यह उपन्यास का संक्षिप्त कथानक है।

(i) कथावस्तु के गुण-

उपन्यास कोई भी हो, उसकी कथावस्तु में तीन गुणों की हमेशा आवश्यकता होती है, वे हैं- रोचकता, सम्भाव्यता, और मौलिकता। यदि कथावस्तु रोचक नहीं है तो पाठक उसे पढ़ेंगे ही क्यों? रोचकता ही तो पाठकों को उपन्यास की ओर आकर्षित करती है। डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में यह गुण आद्यन्त विद्यमान है। रोचकता की ही भाँति सम्भाव्यता भी उपन्यास की कथावस्तु के लिए आवश्यक है। पाठक उपन्यास में अपने ही जीवन जगत का प्रतिबिम्ब देखना चाहता है। अतः उपन्यासकार को सदैव घटनाओं की संभाव्यता के प्रति सचेत रहना चाहिए।

यूनानी **आचार्य अरस्तु** ने संभाव्यता को काव्य का सत्य मानकर इसकी महत्ता का उद्घोष किया है। डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में यह गुण भी परिपूर्ण रूप से व्याप्त है। इन दोनों गुणों के अतिरिक्त मौलिकता भी

१. सत्य की खोज, पृष्ठ-३

कथावस्तु का अनिवार्य गुण है। जो बातें पाठक जानते हैं, उनके प्रति उनमें कोई आकर्षण नहीं हो सकता; अत: उपन्यासकार को चाहिए कि वह चिर-परिचित घटनाओं को उनके समक्ष नवीनरूप में मौलिकता के साथ प्रस्तुत करे।

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में मौलिकता के गुण का भी सफल और सुन्दर निर्वाह दिखाई देता है। इसतरह सफल उपन्यास के लिए आवश्यक-रोचकता, सम्भाव्यता और मौलिकता - ये तीनों गुण डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में दृष्टिगोचर होते हैं।

(ii) कथावस्तु का सहज विकास -

एक सफल उपन्यास के लिए आवश्यक है कि उसकी कथावस्तु निरन्तर और सहजरूप से विकासमान हो। डॉ. भारिल्ल के उपन्यास **सत्य की खोज** में भी विविध घटनाओं के द्वारा कथानक गतिमान है। आरम्भ में निस्सन्तान अर्हत्दास को सहज पुत्रोपलब्धि, जिसका संबंध आगे दसवें सर्ग में कथित साधु के भण्डाफोड़ से जुड़ता है। जहाँ, वह कहता है कि तुम्हारे पूर्वज भी कुलदेवी की आराधना से ही पुत्र का मुँह देख पाए हैं, जिससे रूपमती को ढोंगी साधु के चक्कर से बचाने की पृष्ठभूमि तैयार हुई। इसके बाद तीर्थयात्रा, जहाँ छह माह में पुत्रोत्पत्ति की घटना, ढोंगी साधु से रूपमती का बचना, तत्त्वज्ञान का प्रचार, रुचि बढ़ना, कथित महाराज द्वारा विघ्न उत्पन्न करना, सभी का विवेक के उदात्त गम्भीर विचारों से परिचित होना - इन सब घटनाओं को कथासूत्र में पिरोकर विवेक को उत्साही, गम्भीर, धर्म-पिपासु विद्वान् के रूप में उपस्थित किया है और अन्त में उसकी प्रतिभा कायम रखते हुए सत्य और संगठन दोनों का निर्माण करते हुए उपन्यास का सुखद अन्त किया है।

इसतरह आद्यन्त इस कथानक का अत्यंत सहज विकास हुआ है, इसमें पर्याप्त विश्वसनीयता और गतिशीलता है, जिससे कथानक कहीं भी बोझिल और उबाऊ नहीं हो सका है।

(iii) कथा संगठन -

मानव शरीर में जो महत्त्व रक्त संचार का है, उपन्यास में वही महत्त्व घटनाचक्र का है। उपन्यास में मूल कथा के साथ अनेक अवान्तर घटनाएँ

और प्रसंग जुड़े होते हैं; परन्तु उनकी सफलता घटनाओं की मूलकथा के साथ कुशल संयोजन पर निर्भर करती है, अन्यथा पाठक घटनाओं की भीड़ में खो जाता है और उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो पाती है। उपन्यास में बेमेल घटनाओं के परित्याग के साथ-साथ घटनाओं में पारस्परिक समन्वय भी अनिवार्य है, अन्यथा असंयत बिखरा हुआ घटनाचक्र उपन्यास के प्रभाव को समाप्त कर देता है।

कुशल उपन्यासकार घटनाओं का संयोजन इस कौशल से करता है कि उनमें जीवन रस का प्रवाह विच्छिन्न न हो और उनमें एकसूत्रता बनी रहे, जिससे सभी घटनाएँ भिन्न-भिन्न कार्य का परिणाम न होकर एक-दूसरे से जुड़ी हुई तथा एक घटना दूसरी घटना का परिणाम प्रतीत हो, इससे उपन्यास की प्रबन्धात्मकता रोचक एवं आकर्षक बनती है। डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में घटित समस्त घटनाओं का कथावस्तु के साथ सुन्दर संयोजन है। लेखक ने घटनाओं को बहुत ही व्यवस्थित और सुन्दर तरीके से कथानक के साथ गुंफित किया है।

(iv) रोचक और मार्मिक कथानक -

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास की कथावस्तु अत्यन्त रोचक और आकर्षक होने के साथ ही मार्मिक है। पाठक का मन पल-पल घटना को आत्मसात् करने को लालायित रहता है। पति-पत्नी की रोचक नोंक-झोंक, विरोधियों की आपसी कलह की नुक्ताचीनी तथा सुन्दर उदाहरणों के द्वारा दार्शनिक विषयों का प्रस्तुतीकरण होते हुए भी कथानक बोझिल नहीं हुआ है। इस प्रकार रोचक कथानक को प्रस्तुत करने में लेखक अत्यन्त सफल रहा है।

रोचकता के साथ ही कथानक अत्यन्त मार्मिक भी है, कई स्थलों पर मानवीय संवेदनाओं का मार्मिक चित्रण इस कथावस्तु में दृष्टव्य है। कथानक के प्रारम्भ में विवेक और रूपमती दोनों एक-दूसरे को सुधारने के तीव्र विकल्प में अत्यन्त निम्न स्तर का विरोध प्रदर्शन होने पर भी विरोधियों के प्रति करुणा एवं माध्यस्थ भाव, रूपमती और विवेक की आत्मानुभूति और तत्त्वप्रचार के प्रति तीव्र ललक, विरोधियों का प्रायश्चित्त

इत्यादि - ऐसे प्रसंग हैं, जिसमें अत्यधिक भावात्मकता, मार्मिकता, मानवीय संवेदनाएँ दृष्टिगोचर होती हैं, जो पाठक के अन्तर्मन को छू लेती हैं, जिनके कारण उपन्यास की कथावस्तु अधिक सम्प्रेष्य बन पड़ी है।

(v) घटना संगति -

संगति शब्द से अभिप्राय है कि कथावस्तु में जो भी घटनाएँ दी जाएँ वे सार्थक हों और उनकी एक-दूसरी से पूरी तरह संगति बैठ जाती हो, इसतरह की अनेक घटनाएँ इस कथावस्तु में समन्वित हैं, जैसे शादी के बाद रूपमती को विवेक के ज्ञानप्रधान व्यक्तित्व और विवेक को रूपमती के अन्धविश्वास का परिचय होता है; तो दोनों एक-दूसरे को सुधारना चाहते हैं, इसी भावना को संजोकर तीर्थयात्रा के लिए निकल पड़ते हैं।

वहाँ रूपमती ढोंगी महात्माओं के चंगुल में फंस जाती है और जैसे-तैसे विवेक रूपमती की अंधश्रद्धा तोड़ने में सफल हो जाता है। तब तक विवेक प्रौढ़ हो जाता है और उसका व्यक्तित्व गम्भीर हो जाता है। उसकी आकर्षक प्रवचन शैली से लोग प्रभावित होते हैं, जिससे तथाकथित साधुओं को अपनी दुकानदारी का प्रश्न खड़ा होता है, जिससे वे अनेक प्रकार की विघ्न-बाधाएँ उपस्थित करते हैं, विवेकियों के साथ मारपीट करवाकर उन्हें बदनाम करने की कोशिश करते हैं; परन्तु हर क्षण विवेक की ही जीत होती है।

इसतरह से घटना संगति के चयन और उनके कलात्मक संगठन में उपन्यासकार ने अपनी लोकप्रिय तीक्ष्ण प्रज्ञा का परिचय दिया है।

कथावस्तु की समीक्षा -

आलोच्य उपन्यास की कथावस्तु में अनेकानेक विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं, कथावस्तु में लेखक द्वारा विवेक के माध्यम से धर्म व समाज के बारे में कहा गया यह वाक्य कथावस्तु की सार्थकता को सिद्ध कर देता है -

''धर्म के नाम पर न तो मैं समाज को विघटित होते देख सकता हूँ और न ही मुझसे धर्म की कीमत पर संगठन होगा। मैं धर्म को कायम

रखकर समाज को संगठित करूँगा और समाज को संगठित रखकर धर्म को इनके सामने प्रस्तुत करूँगा।[१]''

इसतरह से निष्कर्ष के तौर पर कह सकते हैं कि प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु रोचक, मार्मिक, कौतूहलपूर्ण, संभाव्य, मौलिक, स्वाभाविक और अपने उद्देश्य को व्यक्त करने में सफल है; सम्प्रेषणीयता, तारतम्यता इत्यादि की दृष्टि से परिपूर्ण है।

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल के उपन्यास का कथानक कथावस्तु तत्त्व की दृष्टि से पूर्ण सफल है।

2. चरित्र-चित्रण -

किसी भी कथा का विकास चरित्रों या पात्रों के द्वारा ही होता है। पात्रों के माध्यम से कथाकार मानव-जीवन के विविध रूप प्रस्तुत करता है। आधुनिक कथाकार कथानक की अपेक्षा चरित्र-चित्रण को अधिक महत्त्व देते हैं। डॉ. गुलाब राय ने लिखा है-''यदि उपन्यास का विषय मनुष्य है तो चरित्र-चित्रण उपन्यास का सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व है; क्योंकि मनुष्य का अस्तित्व उसके चरित्र में है।[२]''

प्रेमचन्द ने तो उपन्यास को मानव-जीवन का चित्र कहकर मानव-जीवन और उपन्यास के घनिष्ठ संबंध की सीधे-सादे शब्दों में घोषणा कर दी है।[३] जब उपन्यास में मानवचरित्र का चित्र उकेरा जाता है तो उसमें चरित्र-चित्रण का होना आवश्यक है। प्रसिद्ध अंग्रेजी उपन्यासकार हेनरी जेम्स ने तो यहाँ तक कह दिया कि उपन्यास के अस्तित्व का एकमात्र कारण यह है कि वह जीवन के चित्रण का प्रयास करता है।[४]

डॉ. रणवीर रांग्रा ने उपन्यास का वास्तविक विषय मानव को माना है। उनके अनुसार उपन्यास का वास्तविक विषय तो मानव है..... इसलिए उपन्यास का विषय मानव-जीवन बन जाता है। मानव एक पहेली है, रहस्य है; उस रहस्य को खोलने का प्रयत्न करना ही उपन्यास का चरम लक्ष्य है।[५]

१. सत्य की खोज, पृष्ठ-२४३
२. डॉ. गुलाब राय : काव्य के रूप, पृष्ठ-१६२
३. प्रेमचन्द : कुछ विचार
४. हेनरी जेम्स : द आर्ट ऑफ फिक्सन: द पोर्टेबल हेनरी जेम्स, पृष्ठ-३९३
५. रणवीर रांग्रा : हिन्दी उपन्यास में चरित्र चित्रण का विकास, पृष्ठ-१५

एडिथवार्टन ने भी लिखा है कि उपन्यास में कथानक के साथ चित्रित पात्रों का होना अनिवार्य है।[१]

वेबस्टर ने उपन्यास में पात्रों की अनिवार्यता को तो माना ही, साथ ही उनके अनुसार पात्र यथार्थ जीवन का प्रतिनिधित्व भी करते हैं।

निष्कर्ष रूप में चरित्र-चित्रण उपन्यास का एक अनिवार्य तत्त्व है, इसीकारण उपन्यास को मनुष्य की यथार्थताओं में बना एक घर कहा गया है। अत: चरित्र-चित्रण के बिना उपन्यास उपन्यास, नहीं कहला सकता है, चाहे और कुछ भी कहलाए; क्योंकि उपन्यास का मूलाधार मानव व उसका चरित्र है।

उपन्यास के अन्तर्गत कथावस्तु के पश्चात् यदि कोई दूसरा महत्त्वपूर्ण तत्त्व है, तो वह चरित्र-चित्रण है। प्रेमचन्द ने उपन्यास को मानव-जीवन का चित्र और चरित्र स्वीकार किया है।[२] वास्तव में वे ऐसा कहकर यह कहना चाहते हैं कि हमारे आस-पास जो मानव-चरित्र दिखाई देते हैं, उन्हीं को किसी कथा के माध्यम से जब उपन्यास में अभिव्यक्ति दी जाती है तो वे चरित्र हमें अपने जैसे लगते हैं और उनकी प्रस्तुति विश्वसनीय हो जाती है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यासों में चरित्रों का विशेष महत्त्व है।

अब प्रश्न यह है कि चरित्रांकन कैसे किया जाये ? वे कौन-सी विधियाँ हैं, जिनके सहारे चरित्र प्रस्तुति सम्भव है, फिर इसी के सन्दर्भ में डॉ. भारिल्ल के उपन्यास का चरित्र-विधान कैसा है ?

इसतरह उपन्यास में पात्र-योजना (चरित्र-चित्रण) का अत्यधिक महत्त्व होता है; क्योंकि कथावस्तु के निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति का माध्यम यही होता है।

(i) उपन्यास में चरित्र विधान -

उपन्यास में कथावस्तु जितना महत्त्व रखती है, उससे कम महत्त्व चरित्रों का भी नहीं है। कुछ समीक्षकों की तो यह धारणा है कि

१. एडिथ वार्टन् : परमानेन्ट वेल्यूज इन फिक्सन, राइटिंग फॉर लब आर मनी - एंड नारमन काउसिन्स, लोंगमेन्स ग्रीन एण्ड टोरोन्टो, पृष्ठ-५२

२. प्रेमचन्द : कुछ विचार भाग-१

"उपन्यासकार जब उपन्यास लिखता है, तब सबसे पहले उसके मानस में कुछ चरित्र उभरते हैं, फिर वह उन चरित्रों के आधार पर कथा की खोज करता है, इससे स्पष्ट होता है कि चरित्रों के लिए कथा की योजना की जाती है। **जैनेन्द्र** जैसे उपन्यासकार यह मानते हैं कि कथा की पूर्वकल्पना आवश्यक नहीं है। दूसरी ओर **डॉ. रांगेय राघव** पूर्वकथा की सर्जना किए बिना अपना कोई उपन्यास प्रारम्भ नहीं करते हैं।

जिन उपन्यासकारों ने चरित्र-चित्रण करने के प्रति विद्रोह किया है, वे केवल प्रयोग के नाम पर वास्तविकता को विस्मृत नहीं कर सकते हैं। यह अलग बात है कि उपन्यासकार मात्र कल्पना के साथ उसके बाह्य विधान से सम्पृक्त होकर उसे सूक्ष्म संकेतों से उभार दे। इसतरह से चरित्र-चित्रण या पात्र-योजना का अत्यंत महत्त्व है। डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में भी चरित्र-विधान अत्यन्त प्रखर रूप से देखने को मिलता है।

(ii) चरित्र-चित्रण के भेद -

विभिन्न प्रकार के चरित्रों की अपेक्षा से चरित्र-चित्रण के भी कई भेद हो सकते हैं। प्रमुख रूप से वर्ग प्रधान, व्यक्ति प्रधान, स्थिर चरित्र और गतिशील चरित्र होते हैं। वर्गप्रधान चरित्र वे हैं जो सम्पूर्ण वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। व्यक्तिप्रधान चरित्र एक सीमा में आबद्ध होते हैं, वे वर्ग से न जुड़कर अपने से जुड़े होते हैं और ऐसे चरित्रों के व्यक्तित्व से उनका निजी व्यक्तित्व ही प्रधान होता है। स्थिर चरित्र वे होते हैं, जिनमें आदि से अन्त तक कोई परिवर्तन नहीं होता है। इसके विपरीत गतिशील चरित्र होते हैं, ये जब भी कोई थोड़ा परिवर्तन देखते हैं तो अपनी दिशा बदल देते हैं।

सत्य की खोज उपन्यास में उक्त चारों ही प्रकार के पात्र दिखलाई देते हैं - वर्गप्रधान चरित्र के अन्तर्गत ढोंगी साधु, मुनिराज तथा अध्यक्ष - इत्यादि को स्थान दिया जा सकता है; क्योंकि ये वे पात्र हैं, जो किसी वर्ग-विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं। व्यक्तिप्रधान चरित्र के अन्तर्गत वे चरित्र होते हैं, जिनका व्यक्तित्व ही प्रमुख होता है। **सत्य की खोज**

उपन्यास में नायक विवेक, रूपमती और विवेक के साथियों को लिया जा सकता है। ये चरित्र अपने व्यक्तित्व से प्रभावित करते हैं और ये ही उपन्यास के प्रमुख चरित्र भी हैं।

स्थिर चरित्र के अन्तर्गत **सत्य की खोज** उपन्यास में सेठ अर्हत्दास, जिनमती और विवेक के मित्र अभय को स्थान दिया जा सकता है। इनके चरित्र को उजागर होने में कम स्थान ही मिला है। गतिशील चरित्र के अन्तर्गत प्रमुख चरित्र के रूप में रूपमती को लिया जा सकता है।

गतिशील चरित्र का यह अर्थ नहीं है कि जो अपने चरित्र को बदल ले, वह गतिशील है; प्रत्युत सच्चा गतिशील चरित्र वह माना जाता है, जो परिस्थितियों के प्रवाह में पड़कर सही दिशा में अपने व्यक्तित्व को परिवर्तित करता हुआ नयी रचनात्मक दिशा में विकास करे।

इसप्रकार से **सत्य की खोज** उपन्यास में विभिन्न प्रकार के चरित्रों का उद्घाटन किया गया है।

(iii) प्रमुख पात्रों की अपेक्षा -

आलोच्य उपन्यास में दो प्रमुख पात्र हैं - युवा विद्वान् विवेक और उसकी पत्नी रूपमती। सारा कथानक इन्हीं के इर्द-गिर्द घूमता है। दोनों क्रमशः अध्यात्म और कर्मकाण्ड के प्रतिनिधि हैं। दोनों ही एक-दूसरे को सत्पथ पर लाना चाहते हैं। पत्नी की समस्या है कि वह मातृत्व से वंचित है, फलतः वह कर्मकाण्ड में फंस जाती है और नायक विवेक की समस्या है कि उसे कैसे समझाए ? यहाँ ढोंगी महात्मा को खलनायक के रूप में देख सकते हैं, जिसके षड्यन्त्रों के चलते ही विवेक की विद्वत्ता, करुणा, सहनशीलता, अनुशासन क्षमता आदि गुणों को लेखक उभार सका है।

सत्य की खोज करके स्व-पर को सत्पथ पर लाना उसके जीवन का एकमात्र ध्येय है, उसे धर्म के नाम पर होनेवाले आडम्बरों, अन्धविश्वासों व ढोंग से घुटन होती है। लेखक विवेक में देवत्व की तलाश करता है। वह आदर्श जैन श्रावक होने के साथ-साथ प्रखर प्रवक्ता, गम्भीर अध्येता, गहरा विद्वान्, क्षमा का सागर, मननशील सूक्ष्म चिन्तक, आदर्श पति, समाज-सेवक, कठोर प्रशासक होने के साथ ही सच्चे अर्थों में मुमुक्षु है।

इसतरह से विवेक का चरित्र आज की भटकती दिशाहीन युवा पीढ़ी को एक सही दिशा या चेतना प्रदान करता है। इसतरह उपन्यास में सभी पात्रों का उनके चरित्र के अनुरूप अत्यन्त सफल चित्रण हुआ है।

(iv) चरित्रांकन विधि –

कथावस्तु की तरह ही चरित्र जब प्रमुख है, तो फिर यह भी एक प्रश्न है कि चरित्रांकन कैसे किया जाना चाहिए ? इस विषय में सर्वप्रथम यह बात कही जा सकती है कि चरित्रांकन की दो विधियाँ प्रमुख हैं – पहली विधि को प्रत्यक्ष-चित्रण विधि कहते हैं और दूसरी को अप्रत्यक्ष अथवा परोक्ष चित्रण विधि कहा जा सकता है। इसके अलावा व्याख्यात्मक विधि, वर्णनात्मक विधि, मनोविश्लेषणात्मक विधि और अन्य पात्रों के मुख से अर्थात् अन्यपरक विधि।

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास **सत्य की खोज** में उपर्युक्त विधियों के माध्यम से पात्रों के चरित्रों का उद्घाटन रोचकता, मार्मिकता और सूक्ष्म भावाभिव्यंजना के साथ किया गया है।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि डॉ. भारिल्ल का उपन्यास **सत्य की खोज** पात्र-योजना (चरित्र-चित्रण) की दृष्टि से अत्यंत सफल है और चरित्र-चित्रण नामक तत्त्व की कसौटी पर पूर्णरूप से खरा उतरता है।

3. कथोपकथन (संवाद-योजना) –

संवाद-योजना का महत्त्व भी कथासाहित्य में अत्यधिक है। यह औपन्यासिक रचना-शिल्प का महत्त्वपूर्ण अंग है। संवादों के कारण उपन्यास में अभिनीत नाटक जैसी विशदता और स्वाभाविकता आ विराजती है।[१] डॉ. श्यामसुन्दरदास के विचार भी इसी अभिमत की संपुष्टि करते हैं। उनके अनुसार- "इस तत्त्व के द्वारा हम उसके पात्रों से विशेष परिचित होते हैं और दृश्य की सी सजीवता और वास्तविकता का बहुत कुछ अनुभव करते हैं।[२]"

डॉ. प्रतापनारायण टण्डन ने अपेक्षित वातावरण की सृष्टि के लिए भी कथोपकथन के महत्त्व को स्वीकार किया है।[३]

१. डॉ. शशिभूषण सिंहल : उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा, पृष्ठ-२०५
२. डॉ. श्यामसुन्दरदास : साहित्यालोचन, पृष्ठ-२०५
३. डॉ. प्रताप नारायण : हिन्दी उपन्यास का उद्भव व विकास, पृष्ठ-६१

आदर्श कथोपकथन की विशेषताएँ बताते हुए आर्लोबट्स ने लिखा है- ''ऐसी रचना जो मनुष्यों की साधारण बातचीत का सा प्रभाव उत्पन्न करे, अथवा यथासम्भव उस सम्भाषण-सा लगे जो कहीं ओट में होकर सुना गया हो।[१]'' डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री ने लिखा है- ''कथावस्तु के साथ आवश्यक सम्बन्ध के अतिरिक्त कथोपकथन को स्वाभाविक, उपयुक्त व नाटकीय होना चाहिए।[२]'' प्रेमचन्द के अनुसार संवाद स्वाभाविक परिस्थत्यनुरूप सरल व सूक्ष्म होना जरूरी हैं।[३] डॉ. कैलाशप्रकाश ने संवादों की संक्षिप्तता पर अत्यधिक बल दिया है।[४]

इसतरह संवाद-योजना कथानक को गतिशीलता प्रदान करने, पात्रों के अन्त:संघर्ष की सटीक अभिव्यंजना करने तथा उपन्यासकार के निजी आदर्शों एवं जीवन दर्शन को अभिव्यक्त करने में महत्त्वपूर्ण योगदान देती है। निष्कर्ष रूप से यही कहा जा सकता है कि कथासाहित्य में संवाद-योजना की नितान्त आवश्यकता, उपयोगिता एवं पूर्ण महत्ता है।

उपन्यास में कथावस्तु और चरित्र-चित्रण के बाद सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व कथोपकथन या संवाद है। एक सफल उपन्यास के सृजन हेतु सशक्त संवाद-योजना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। उपन्यासों में नाटकीयता लाने के लिए संवादों का प्रयोग किया जाता है। संवादों के कारण औपन्यासिक कथावस्तु का स्वाभाविक विकास और पात्रों के सर्वोन्मुखी चरित्रांकन में सहायता मिलती है और उपन्यासकार के मूल उद्देश्य की भी पूर्ति हो जाती है।

उपन्यास में कथानक के विकास, चरित्रों की व्याख्या, वातावरण निर्मिति तथा उपन्यासकार के विशिष्ट दृष्टिकोण आदि का रूपायन करने के उद्देश्य से ही संवाद की योजना की जाती है। डॉ. भारिल्ल के उपन्यास **सत्य की खोज** की संवाद-योजना अत्यंत मार्मिक, सरल, संक्षिप्त, रोचक आकर्षक, कौतूहलोद्दीपक और प्रभावोत्पादक है।

१. Arlobatus : Talk a writing B english' sories - 2 page - 23
२. डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री : हिन्दी उपन्यास साहित्य का शास्त्रीय विवेचन, पृष्ठ-२०१
३. प्रेमचन्द : कुछ विचार भाग-१, पृष्ठ-५५
४. डॉ. कैलाश प्रकाश : प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी उपन्यास पृष्ठ-३३

संवाद की विशेषताएँ -

उपन्यास की कथावस्तु पात्र तथा परिवेश आदि से संवादों का पहला गुण उनकी स्वाभाविकता मानी जा सकती है। स्वाभाविकता के साथ-साथ संवादों की संक्षिप्तता भी उनका उल्लेखनीय गुण है। तीसरी विशेषता के रूप में तीव्र प्रभावान्विति को लिया जा सकता है। संवादों की एक विशेषता उनकी सम्बद्धता होती है। उपन्यास में संवाद अप्रासंगिक तथा थोपे गये नहीं लगना चाहिए। वे उपन्यास की कथावस्तु और पात्र तथा परिप्रेक्ष्य - इत्यादि से संबंधित होने चाहिए।

निरुद्देश्य संवाद-योजना उपन्यास कला को बोझिल बनाकर हानि पहुँचा सकती है। कहने का अभिप्राय यह है कि संवादों की अनेक विशेषताएँ हैं, पर स्वाभाविकता, संक्षिप्तता, गतिशीलता, चरित्रोद्घाटन क्षमता, सोद्देश्यता और सम्बद्धता आदि इसकी प्रमुख विशेषताएँ स्वीकार की जा सकती हैं, इन विशेषताओं की उपस्थिति से संवाद सफल होते हैं।

सत्य की खोज उपन्यास संवाद-प्रयोग की दृष्टि से एक ऐसी ही सफल कृति है। इसप्रकार पाठक संवादों में ही पात्रों की मानसिक भावभूमि और लेखक की अन्त:चेतना से परिचित होते हैं, अत: उपन्यास की रोचकता, उद्देश्यपूर्ति के लिए कथोपकथनों का स्तर सुरुचिपूर्ण होना जरूरी है, जिससे उपन्यास के कथानक को गति मिलती है एवं पात्रों के चरित्र का प्रत्यक्ष, परोक्ष रीति से विकास होता है।

कथोपकथन के माध्यम से जहाँ पात्रों के व्यक्तित्व का परिचय होता है, वहीं वे देशकाल, वातावरण की रोचक प्रस्तुति का माध्यम बनते हैं। अच्छे संवादों में सारगर्भितता, सजीवता, नाटकीयता, भावप्रवणता तथा सम्प्रेषणीयता अपेक्षित होती है। इस दृष्टि से डॉ. भारिल्ल कृत उपन्यास **सत्य की खोज** पूर्ण रूप से खरा उतरता है।

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में संवाद-योजना

सत्य की खोज उपन्यास में स्वाभाविकता, भावप्रवणता और रोचकता लाने के लिए उपन्यासकार ने अनुकूल संवादों का चयन किया है, यथा -

(i) नाटकीय संवाद -

उपन्यासकार ने कथानक में उत्सुकता, रोचकता और गतिशीलता लाने के लिए नाटकीय संवादों की योजना की है -

''विवेककुमार उत्तेजित होकर बोला - मैं शादी को सौदा नहीं मानता। सौदा तो व्यापार में होता है। तो क्या शादी भी व्यापार है ? तुम भी क्या हो ? जीवन साथी की तुलना दो पैसे की हांडी से करते हो ? फिर क्या हांडी भी तो उसका रूप-रंग देखकर नहीं ली जाती, उसके गुण और उसकी अखंडता देखी जाती है। कन्या का भी चरित्र और गुण देखे जाने चाहिए, न कि रंग-रूप और दहेज''

इसीप्रकार पात्र आपस में अभिधा लक्षणा-व्यंजना की भाषा से प्रसंग विशेष में या घटना विशेष की परिस्थिति में कहे गये संवादों से उपन्यास के कौतूहल में वृद्धि करते हैं -

''आज क्या माल-मसाला बन रहा है, इतनी जल्दी ?''

''खाकर देखो।''

''खाकर क्या देखें, तुम्हें देखकर ही तबियत खुश हो जाती है।''

''क्या ? मुझे कभी देखा नहीं था।''

''देखा तो कई बार, पर इतना प्रसन्न बहुत कम।''

इसतरह से नाटकीय संवाद कई स्थलों पर दृष्टिगोचर होते हैं।

(ii) चरित्रोद्घाटक संवाद -

उपन्यास में पात्रों का चारित्रिक विकास संवादों के द्वारा ही होता है। ऐसे संवाद प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में होते हैं। प्रत्यक्ष रूप से वार्तालाप करनेवाले पात्रों की गतिविधि, क्रियाकलाप, भाषा और व्यवहार के माध्यम से उनके चरित्र पर प्रकाश पड़ता है और परोक्ष रूप से अनुपस्थित पात्रों के संदर्भ में, अन्य पात्रों द्वारा किये जा रहे वार्तालाप द्वारा प्रकाश पड़ता है। इस उपन्यास में दोनों प्रकार के संवादों का समावेश है, यथा -

(क) प्रत्यक्ष चरित्रोद्घाटक संवाद -

''विवेक ने कहा - यही कि वे जहाँ भी सम्बन्ध करें, मुझे कोई ऐतराज नहीं है, पर यह ध्यान रखें कि मैं शादी में अधिक आडम्बर पसन्द

नहीं करता। दोनों ही ओर से पैसे की बर्बादी मुझे बिलकुल पसन्द नहीं। मैं तो सादगी से आदर्श शादी करना चाहता हूँ। लड़की देखकर शादी की जाये, पार्टी देखकर नहीं। मुझे स्वयं लड़की देखने कहीं नहीं जाना है, यह सब काम पिताजी और माँ का है, वे ही करें।''

तथा -

उद्विग्न-सा विवेक बोला - ''तुम समझती क्यों नहीं रूपमती। मैं नहीं चाहता कि समाज के दो टुकड़े हों और वह भी मेरे निमित्त से। और वे दो-चार आदमी भी तो अपने ही समाज के हैं, भले ही वे आज भ्रमित हैं, पर शान्ति से उनका भ्रम दूर किया जा सकता है। एकता का रास्ता प्रेम का रास्ता है, संघर्ष का नहीं।''

इसीप्रकार से सामाजिक संगठन व धर्म के बारे में अभिव्यक्त विचारों से नायक विवेक का चरित्रोद्घाटन होता है -

''धर्म के नाम पर न तो मैं समाज को विघटित होते देख सकता हूँ और न मुझसे धर्म की कीमत पर संगठन ही होगा। मैं धर्म को कायम रखकर समाज को संगठित रखकर, धर्म को उसके सामने प्रस्तुत करूँगा - यह मेरा संकल्प है।''

(ख) परोक्ष चरित्रोद्घाटक संवाद -

ऐसे संवादों में किसी व्यक्ति के कथनों द्वारा अन्य व्यक्ति के चरित्र का उद्घाटन होता है। **सत्य की खोज** में भी इसके प्रचुर उदाहरण विद्यमान हैं, यथा -

''मैं महात्माजी को दिव्यज्ञानी समझ रही थी। वे कहते भी तो थे - बिना पूछे स्वयं ही कि - मुझे सब पता है। पर वह तो इतना भी नहीं जान सके कि हमारे सन्तान पैदा ही नहीं हुई। विवेक के जरा-सा गुमराह करने पर कहने लगे कि - मुझे सब पता है कि तुम्हारे बच्चे बचते नहीं। इसी प्रकार कुलदेवी की मढ़ियाँ, पूजा आदि की काल्पनिक बातों को भी उसी प्रकार कहते गए कि मुझे सब पता है।''

तथा -

''यही कि उन्हें विवेक के अध्यात्म ने कायर बना दिया है। अब उनमें यह हिम्मत नहीं रही जो अपन से लड़ने की सोचें।''

इसतरह से **सत्य की खोज** में प्रत्यक्ष व परोक्ष दोनों ही प्रकार के संवादपात्रों के चरित्रोद्घाटक के रूप में सामने आते हैं।

(iii) गतिशील संवाद -

उपन्यास की संवाद-योजना इसतरह हो, जिसमें कथानक गतिशील रहे और स्वाभाविक विकास होता रहे, साथ ही अग्रिम घटना की सूचना संसूचित होती रहे। प्रस्तुत उपन्यास में इन संवादों का पर्याप्त बाहुल्य है, यथा -

''क्या कहा?'' आश्चर्यचकित होता हुआ विवेक बोला।

''यही कि मेरी मनमाँगी मुराद पूरी हो गई।''

''तो क्या अब तुम माँ बनने वाली हो ?''

''नहीं तो.....''

''फिर.....''

''फिर क्या.....''

''यही कि तुम्हारी एकमात्र तमन्ना पुत्र प्राप्ति की ही तो थी।''

''थी जब थी, पर अब नहीं है।''

''कब से?''

''तभी से, जब से तुम्हारे अध्यात्म के चक्कर में.....।''

(iv) पात्रानुकूल संवाद -

उपन्यास में अनेक स्तर के, वर्गों के पात्र होते हैं। उनके अनुकूल संवादों से उपन्यास की स्वाभाविकता, प्रामाणिकता में वृद्धि होती है। उपन्यास में रूपमती कर्मकाण्ड की प्रतिनिधि भोली-भाली स्त्री है, तो विवेक गम्भीर तार्किक विद्वान और महात्माजी धर्म के नाम पर रोटी सेंकने वालों के प्रतिनिधि हैं। उपन्यास सत्य की खोज में पात्रानुकूल संवाद प्रयुक्त हुए हैं -

घबड़ाते हुए रूपमती बोली - ''महाराज ! महाराज !! ये मेरे.....''

महाराज बीच में ही टोकते हुए बोले - ''मैं जानता हूँ कि ये तुम्हारे पति हैं।''

''एँ महाराज! आप कैसे जानते हैं ? मैंने बताया नहीं, पहले कभी परिचय भी नहीं हुआ। आप तो.....।''

महाराज बोले - ''ठीक है, ठीक है; इसमें क्या ? क्या हम बिना बताए इतना भी नहीं जान सकते ? यदि नहीं जान पायें तो हममें और तुममें अन्तर ही क्या रहा ?''

(v) संक्षिप्त, सरल संवाद -

सत्य की खोज में ऐसे संवादों की भी प्रचुरता है, यथा -

''श्रद्धा रखोगे तो अवश्य मिलेगा।''

''लाभ मिलेगा तो श्रद्धा क्यों नहीं रखूँगा।''

''तो ठीक है, पूछना, अवश्य पूछना।''

''पर एक बात है, तुझे चुप रहना होगा।''

(vi) उद्देश्यपूर्ण संवाद -

उपन्यास के संवाद सोद्देश्य एवं पात्रों की मनोदशा का चित्रण करने वाले होने चाहिए। निरुद्देश्य संवाद शब्दाडम्बर के अलावा कुछ नहीं हैं। **सत्य की खोज** के संवाद सोद्देश्य हैं। यथा-

''इतना तो मैं भी नहीं जानता, महाराज! पर आपने जो बताया, उसमें मैं जितना जानता हूँ, सब सत्य है।''

''सत्य क्यों नहीं होगा, बेटा! मैं कोई गप्पें थोड़े ही हाँक रहा हूँ। मुझे जो दिखाई दे रहा है, वही बता रहा हूँ।''

(vii) मार्मिक संवाद -

आलोच्य उपन्यास में ऐसे संवादों की कमी नहीं है कि जिन्हें पढ़कर, अनुभव करके पाठक का अन्तर्मन भीग न जाए। अनेक मार्मिक संवाद इस उपन्यास में भरे पड़े हैं, यथा -

''अर्ध जाग्रत अवस्था में रूपमती उठकर बैठ गई और कहने लगी - हे भगवान! माफ कर दो, मैं आपसे.....।''

तथा -

रूपमती कहने लगी -

''कुछ न कुछ अवश्य करना चाहिए।''

''किस बात के लिए ?''

''इनके चंगुल में फंसे निरीह लोगों को बचाने के लिए।''

निष्कर्ष -

इसप्रकार **सत्य की खोज** में सारगर्भित, व्यंग्यात्मक एवं घटना तथा वातावरण के अनुकूल संवाद प्रयुक्त हुए हैं। कहीं गतिशील छोटे चुटीले संवाद हैं, तो कहीं व्यंजनाशक्ति से भरे अर्थपूर्ण संवाद निश्चित उद्देश्य की पूर्ति में सहायक बन पड़े हैं। यद्यपि लेखक कहीं-कहीं उपदेश के व्यामोह में रम गया, जिससे उपन्यास की लय टूटती-सी प्रतीत होती है; परन्तु फिर भी इसके संवाद पाठकों के लिए हृदयग्राही बन गए हैं।

इस प्रकार साररूप में हम कह सकते हैं कि लेखक संवाद-योजना में पर्याप्त निष्णात है, जिससे कथानक को गति मिलती है तथा सरल सजीव नाटकीय गुण से युक्त संवाद-योजना की दृष्टि से यह उपन्यास एक श्रेष्ठ रचना है।

4. वातावरण -

जब हिन्दी उपन्यास प्रारंभिक काल में था, तब भारत का शासन महारानी विक्टोरिया के हाथ में था। देश का राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक वातावरण जड़ीभूत था। जनता में एक ओर सुधार के प्रति जड़वादी दृष्टिकोण था, तो दूसरी ओर कुछ समाजसुधारकों का आविर्भाव हुआ। समाज के इसी वैषम्यपूर्ण नीरस वातावरण में क्षणिक विश्राम की प्रवृत्ति से प्रेरित ये उपन्यास लिखे गए थे।[१] लेकिन प्रेमचन्द ने साहित्य को समय के साथ जोड़ा और जीवन तथा समाज के साथ जोड़ा। प्रेमचन्द लिखते हैं-'साहित्यकार बहुधा देश से प्रभावित होते हैं, जब कोई लहर देश में आती है तो साहित्यकार के द्वारा अविचलित रह पाना असम्भव हो जाता है और उसकी विशाल आत्मा देश-बन्धुओं के कष्टों से विकल हो उठती है।[२]

१. शिव नारायण श्रीवास्तव : हिन्दी उपन्यास, पृष्ठ-४३

२. हंस : अप्रेल १९३२, पृष्ठ-४०

वस्तुत: साहित्य भी समाज को प्रेरणा दे सकता है; किन्तु तभी, जब लेखक में स्वभावत: उस प्रेरणा से उत्पन्न हुआ असन्तोष, अशान्ति और विद्रोह भाव हो .....।[१] प्रेमचन्द ने वातावरण सृष्टि की एक स्वस्थ परम्परा चलाई। उनके पात्रों की मानसिकता, क्रियाकलाप, उत्थान-पतन तथा उनके विचार आदि हमें तत्कालीन वातावरण का बोध करा देते हैं।

साहित्यकार अपने आसपास के जिस परिवेश को भोगता है, जिसमें जीता है; उसको उतारने के लिए प्रतिबद्ध होता है। उसके चरित्र भी वही बने हैं, जो उसके परिवेश ने बनवाए हैं। उसी परिवेश, उसी वातावरण का यथार्थ चित्रण आज के कथासाहित्य की पहिचान है।

उपन्यास में देशकाल और वातावरण का विशेष महत्त्व होता है। देशकाल और वातावरण का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करके ही कोई रचनाकार अपनी रचना के प्रति ईमानदारी व्यक्त करता है। उपन्यास में देशकाल की परिस्थितियों, परम्पराओं, जीवन पद्धतियों का जितना बढ़िया चित्रण हो, उतना अच्छा प्रामाणिकता व सजीवता का समावेश होता है। स्थानीय पात्रानुकूल हिसाब से वर्णन करने पर, इसकी विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न नहीं लग पाता है।

सामान्यरूप से अन्त:बाह्य के भेद से वातावरण दो प्रकार का होता है - आन्तरिक वातावरण में घटनाओं, परिस्थितियों, पात्रों की मानसिक दशाओं, अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण होता है तथा, बाह्य वातावरण का अर्थ - सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, प्राकृतिक परिवेश के सूक्ष्म विवेचन से लिया जाता है। जितनी सूक्ष्मता, गहनता, यथार्थता, स्वाभाविकता होने से इनका चित्रण होगा, उपन्यास सफलता के मापदण्डों पर इतना ही खरा साबित होगा।

उपन्यास ''सत्य की खोज'' का देशकाल (वातावरण)

प्रस्तुत उपन्यास ऐतिहासिक न होकर पूर्णत: कल्पनाप्रसूत होते हुए भी वर्तमान, सामाजिक, धार्मिक पृष्ठभूमि पर आधारित है। इसके साथ ही स्वयं लेखक ने इस बात का आग्रह प्रस्तावना में किया है कि ''पाठकगण

१. अज्ञेय : त्रिशंकु, पृष्ठ-७०

व्यक्ति और स्थान की अपेक्षा सत्य और तथ्य की ही खोज करें।'' फिर भी, किसी लेखक की कृति पर तात्कालिक वातावरण ही उपन्यास का जनक तत्त्व है। काल्पनिक कथानक के कारण उपन्यास में वातावरण को ज्यादा प्रधानता नहीं मिल पायी है, फिर भी उपन्यास के लेखन समय को ध्यान में रखकर उसका अध्ययन करने पर तात्कालीन सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिवेश को हम उपन्यास में देख सकते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास **सत्य की खोज** के आरंभ में ही मनमोहक प्राकृतिक वातावरण की झलक मिलती है। १८ वें सर्ग में तात्कालिक, सामाजिक वातावरण का चित्रण लेखक ने किया है। उससमय तथाकथित ढोंगी महात्माओं एवं रूपमती जैसे भोले-भाले श्रद्धालुओं की कमी नहीं थी। लोग कुरीतियों में विश्वास रखते थे। धर्म के सही स्वरूप को नहीं समझते थे। इसके अलावा कुछ लोग ऐसे भी थे, जो सत्य धर्म की शोध-खोज में तत्पर रहते थे; परन्तु उन्हें उचित मार्ग नहीं मिलता था, लोग विधर्मी समझकर उनका विरोध करते थे तथा **श्रेयांसि बहुविघ्नानि** की उक्ति अनुसार विघ्न करनेवाले लोगों की कमी नहीं थी।

इसप्रकार से **सत्य की खोज** में उचित वातावरण का समावेश हुआ है।

5. भाषा-शैली -

साहित्य की प्रत्येक विधा की रचना में भाषा और शैली अपरिहार्य तत्त्व के रूप में विद्यमान रहती है। उपन्यास की शिल्प-विधि की संरचना में शैली तत्त्व का विशिष्ट स्थान है, इसी के द्वारा कथाकार अपनी रचना को प्रभावपूर्ण और आकर्षक बना सकता है। यदि भाषा भावाभिव्यक्ति का माध्यम है, तो उस माध्यम के प्रयोग की विधि का नाम शैली है। शैली अभिव्यक्ति का विशिष्ट अंग है।[४]

शैली की संरचना में उपन्यासकार के व्यक्तित्व का विशेष योगदान होता है। डॉ. प्रेम भटनागर के अनुसार ''प्रत्येक कथाकार का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व होता है..... इसीप्रकार उसकी एक स्वतंत्र शैली होती

४. जे. मिडल्टन म्यूरी - दी प्रॉब्लम ऑफ स्टाइल-५

है। यह शैली उसके विचार, भाव, कल्पना, संस्कार, स्वभाव, प्रतिभा और जीवनदृष्टि के अनुरूप अभिव्यक्ति पाती है।[१]''

इसतरह हम कह सकते हैं कि कथासाहित्य की रचना में शैली की विशेष भूमिका है। जहाँ तक भाषा का सम्बन्ध है, तो उपन्यासों की भाषा प्रसंग, पात्र एवं परिवेश के अनुरूप होनी चाहिए। संस्कृत गर्भित, तत्सम शब्दावली से पूर्ण परिनिष्ठित साहित्यिक भाषा और बोलचाल की सामान्य भाषा - दोनों का ही प्रयोग उपन्यास में किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त आंचलिकता की प्रभावाभिव्यक्ति के लिए लोकजीवन की शब्दावली एवं ग्रामीण बोलियों के मुहावरों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

कथासाहित्य में और विशेषकर उपन्यास रचना में भाषा से भी अधिक महत्त्व शैली का है। उपन्यासों की रचना विभिन्न शैलियों में होती है। सामान्यत: वर्णनात्मक, आत्मकथात्मक, पत्रात्मक एवं डायरी शैली का प्रयोग उपन्यास लेखन में किया जाता है। कुछ उपन्यासों की रचना इन सब शैलियों के मिश्रित रूप द्वारा होती है।

इसप्रकार प्रसंगगर्भत्व के साथ-साथ उपन्यास की भाषा-शैली में सम्प्रेषणीयता का होना अत्यधिक वांछनीय है। इसतरह, उपन्यासकार को कथाप्रसंगों, पात्रों की प्रवृत्ति और प्रतिपादित परिवेश के अनुरूप भाषा-शैली की संरचना करनी चाहिए।[२]

उपन्यास बहुपठित विधा है, इसलिए प्रयुक्त भाषा सहज और सरल होनी चाहिए। किन्तु ऐसे उदाहरण भी हैं कि जिसमें भाषा सहज व सरल न होकर विशिष्ट हो गई है या संस्कृतनिष्ठ हो गई है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, प्रसाद और अज्ञेय के उपन्यासों में ऐसी ही भाषा प्रयुक्त हुई है। वस्तुत: उपन्यास की भाषा सरल, लोक के विचारों को व्यक्त करनेवाली एकमात्र माध्यम होती है। सशक्त मार्मिक प्रस्तुति के लिए भाषा सरल,

१. डॉ. प्रेम भटनागर : हिन्दी उपन्यास शिल्प बदलते परिप्रेक्ष्य, पृष्ठ-३१
२. बसंती पंत : हिन्दी उपन्यास रचना विधान और युगबोध, पृष्ठ-३४

भावानुकूल पात्रों के स्तरानुकूल होनी चाहिए। भाषा के द्वारा उपन्यासकार के व्यक्तित्व और अभिव्यक्ति क्षमता का पता लगता है।

"सत्य की खोज" की भाषा

प्रस्तुत उपन्यास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि लेखक द्वारा लिखी गई भाषा सभी पात्रों के स्तरानुकूल है। उपदेशात्मक स्थलों पर संस्कृतनिष्ठ भाषा, शान्त क्षणों में प्रवाहमयी भाषा, उपन्यास की स्वाभाविकता में वृद्धि करती है। इसके अलावा बुन्देलखण्ड की मिट्टी से जुड़े होने के कारण बुन्देली भाषा का लहजा, मुहावरेदार लोकभाषा का प्रयोग, सहज ही उपन्यास में समाविष्ट हो गए हैं।[१]

यद्यपि इससे अन्य पाठकों को क्लिष्टता अनुभव हो सकती थी; परन्तु उनके प्रयोग इस कौशल से किए गए हैं कि उनका भाव पाठक समझ लेता है। इसके अलावा संस्कृतनिष्ठ भाषा, संस्कृत के उद्धरण लेखक के संस्कृतज्ञ होने का अनुमान कराती है।

उपन्यास की भाषा की सबसे बड़ी विशेषता है कि उसमें कहीं भी कृत्रिमता नहीं झलकती है। सरल, सहज प्रवाहयुक्त भाव-सम्प्रेषण में समर्थ पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग दर्शनीय है। लेखक ने कहीं भी पाण्डित्य प्रदर्शन करने का प्रयत्न नहीं किया है। इसकारण उपन्यास तत्सम क्लिष्ट शब्दावली से बोझिल नहीं हुआ है। लेखक ने प्रस्तुत घटनाओं के प्रेरक, हृदयग्राही शब्दचित्र प्रस्तुत किए हैं और वे इतने सजीव हो उठे हैं, मानो शब्द ही बोल रहे हों। लेखक ने उपन्यास में सूक्तियों का रमणीय प्रयोग भी किया है। लेखक के भाषा-वैभव को इसतरह देख सकते हैं -

(i) तत्सम शब्द -

उपन्यास **सत्य की खोज** में तत्सम शब्दों की भरमार है, यथा - शस्य श्यामला, आवेष्टित, चिरकाल, वृद्धिंगत, जिनोपदिष्ट, श्रमण, उत्ताल, प्रज्ञा, ज्ञाता, दृष्टा, तिरोहित, अप्रतिहत, शार्दूल, वेत्ता, दुन्दुभि, वेत्रवती, मोहाच्छन्न, उद्भूत, मुदित, कुसुमनाल, जवापुष्प - इत्यादि।

---

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) सप्तम खण्ड, पृष्ठ-९०

(ii) अरबी-फारसी के शब्द -

खूबसूरत, पस्त, जिस्म, चंगुल, बेतहाशा, अफसोस, गम, ऐंठना, खुश, असमंजस, खीज, ठाट-बाट, अफवाह, दरअसल, तहेदिल, अजीबोगरीब, शान-शौकत - इत्यादि।

(iii) अंग्रेजी शब्द -

रेपूटेशन, मेकअप, मीटिंग, वनवे ट्रेफिक, क्लब, ग्रुप, ब्लॉक, एजेन्डा, ऑपरेशन - इत्यादि।

(iv) सूक्तियों की छटा -

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास **सत्य की खोज** में सूक्तियों की सुन्दर छटा दिखायी देती है, इसमें समागत कुछ सूक्तियाँ इसप्रकार हैं -

१. विरोध प्रचार की कुंजी है।
२. अंधश्रद्धा तर्क को स्वीकार नहीं करती।
३. तर्क की कसौटी पर सर्वथा असत्य उतरने वाली मूर्खतापूर्ण अफवाहें सामान्यजनों को ही आकर्षित कर पाती हैं।
४. यौवनागम में कल्पना की उत्ताल तरंगों से आज तक कौन बच पाया है।
५. धर्म परम्परा नहीं, स्व-परीक्षित साधना है।
६. भक्ति तो भगवान के गुणों के प्रति अनुराग को कहते हैं।
७. श्रद्धा का लुटेरा ही सबसे बड़ा लुटेरा है।
८. सत्य नहीं, सत्य की खोज खो गई है।
९. विवेक के बिना जीव जहाँ भी जायेगा, ठगाया ही जाएगा।
१०. बिना विवेक के श्रद्धा अन्धी होती है।
११. सफलता संगठन और असफलता विघटन की जननी है।
१२. स्वयं शांत रहनेवालों की शांति कौन भंग कर सकता है।
१३. धर्म के लिए सत्य जरूरी है और समाज के लिए संगठन।

इसप्रकार से डॉ. भारिल्ल के उपन्यास सत्य की खोज की भाषा का सौन्दर्य अनुपम है। भाषा में लाक्षणिकता के साथ ही व्यंजनात्मकता है

तथा प्रसाद, माधुर्य और ओज इन तीनों गुणों के साथ मुहावरेदार और सरस भाषा का प्रयोग दिखाई देता है।

"सत्य की खोज" उपन्यास की शैली

किसी भी रचना की अच्छी शैली उस रचना में चार चाँद लगा देती है।[१] दूसरी बात यह है कि शैली ही लेखक के व्यक्तित्व की परिचायिका होती है। प्रस्तुत उपन्यास में अनेक शैलियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। विविध-शैलियों के प्रयोग से उपन्यास का सौन्दर्य आकर्षक हो गया है। इसमें प्रयुक्त शैलियाँ इसप्रकार हैं -

(i) उपदेशात्मक शैली -

यह शैली अनेक स्थानों पर देखी जा सकती है, यथा-

"एक आत्मा ही उपादेय है, वास्तविक अर्थों में एकमात्र वही ध्येय है, वास्तविक आराध्य है और समस्त जगत हेय है, त्याज्य है।"

तथा-

"प्रत्येक द्रव्य स्वयं परिणमनशील है, उसे अपने परिणमन में पर के सहयोग की रंचमात्र भी आवश्यकता नहीं है।"

(ii) मनोविश्लेषणात्मक शैली -

यह शैली भी सत्य की खोज में कई जगह विद्यमान है, यथा -

"नहीं, नहीं, गलती तो मुझसे ही हुई है आज तक। पर मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि जब वह ढोंगी महात्मा इतनी-सी बात भी नहीं जान सका कि हमारे बच्चे होते नहीं हैं या बचते नहीं हैं, तो फिर वह अपनी सात पीढ़ियों की बातें सही-सही कैसे जान गया ?"

तथा -

"पर विवेककुमार को यह सब पसन्द न था। वह नहीं चाहता था कि उसकी शादी के नाम पर व्यर्थ का आडम्बर और बर्बादी की जाये। वह यह भी नहीं चाहता था कि उसकी शादी के नाम पर, कन्या के पिता पर व्यर्थ ही बलात् आर्थिक बोझ डाला जाय।"

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) सप्तम खण्ड, पृष्ठ-९१

(iii) सूत्रात्मक शैली -

यह शैली भी अपने सहज प्रवाह से पाठकों को मनोमुग्ध करती है- यथा- ''श्रद्धा का लुटेरा ही सबसे बड़ा लुटेरा है।''

तथा- ''बिना विवेक के श्रद्धा अंधी होती है।''

(iv) वर्णनात्मक शैली-

यह शैली भी इस उपन्यास में दर्शनीय है, यथा-

''वीतरागी परमात्मा का उपासक तो वीतरागता का ही उपासक होता है। लौकिक सुख की आकांक्षा से परमात्मा की उपासना करनेवाला व्यक्ति वीतरागीसर्वज्ञ भगवान का उपासक नहीं हो सकता। वस्तुत: वह भगवान का उपासक न होकर भोगों का उपासक है।''

(v) अलंकृत शैली -

यह शैली भी 'सत्य की खोज' में परिलक्षित होती है, यथा-

''कौन नहीं जानता - शस्य श्यामला भूमि से आवेष्टित विन्ध्याचल की घुमावदार पहाड़ियों के अंचल में वेत्रवती नदी के किनारे बसी विदिशा नगरी को।''

(vi) व्यंग्यात्मक शैली -

''चतुर लुटेरा यह अच्छी तरह जानता है कि श्रद्धा को लूटे बिना, किसी को पूरा नहीं लूटा जा सकता। श्रद्धा लूटने के लिए बहुत कुछ करना होता है। अज्ञानी होते हुए भी ज्ञान का, अत्यागी होते हुए भी त्याग का, सब कुछ रख कर भी कुछ न रखने का, सब कुछ करते हुए भी कुछ न करने का प्रदर्शन करना पड़ता है; क्योंकि इनके बिना किसी की भी श्रद्धा को लूटना संभव नहीं है। धर्म के नाम पर ढोंग के प्रचलन का मूल केन्द्र-बिन्दु यही है।''

(vii) हास्य विनोद शैली-

रूपमती- 'अच्छा एक बात बताओ, आज साग क्या बनाऊँ?

मुस्कराते हुए विवेक बोला-'यह प्रश्न कौन-सा शास्त्र पढ़ते समय समझ में नहीं आया था?'

'पाकशास्त्र'

'मैं पाकशास्त्र का विशेषज्ञ नहीं, वह तो मुझे तुमसे पढ़ना होगा।'

(viii) दृष्टान्त शैली -

''यही कि भौतिकवादी भोग के सागर के बीच हम बड़वाग्नि के समान जल रहे हैं, डंके की चोट आत्मा की चर्चा कर रहे हैं, हजारों की भीड़ में आत्मा का प्रतिपादन कर रहे हैं। क्या हमारी शक्ति और सत्ता के लिए इतना काफी नहीं है ? तथा भोग के सागर में आनेवाली बाढ़ को भी हमारी इस अध्यात्मधारा ही ने रोक रखा है, अन्यथा न जाने यह दुनियाँ कब की बह गई होती।''

इसतरह डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में अनेक शैलियों का भाषा के साथ मणिकांचन संयोग देखने को मिलता है। उपर्युक्त शैलियों के अलावा उदाहरणात्मक शैली, भावात्मक शैली, चित्रांकन शैली-इत्यादि कई शैलियों का प्रयोग किया गया है। इन विविध शैलियों के प्रयोग से लेखक के चिन्तन की प्रौढ़ता और अनुभव का गाम्भीर्य झलकता है। उपन्यास सुघड़, प्रवाहपूर्ण, कलात्मक भाषा-शैली के प्रयोग से अद्वितीय बन पड़ा है। अनुपमेय, बोधगम्य शैली के चलते ही उपन्यास रोचक बन पड़ा है।

6. उद्देश्य -

जिसप्रकार महाकाव्य का सृजन किसी महद् उद्देश्य की सिद्धि हेतु किया जाता है; उसीप्रकार उपन्यासकार भी सजग कलाकार की भाँति केवल समाज के दर्पण के रूप में ही अपनी कलाकृति को प्रस्तुत नहीं करता वरन् वह जीवन को उसकी पूर्णता और व्यापकता में देखने का प्रयत्न करता हुआ चलता है।[१] वास्तव में उपन्यासकार अपनी कृति में किसी विशिष्ट दृष्टिकोण का सहारा लेता है और उसके आधार पर मानव जीवन का मूल्यांकन करते हुए अपने जीवनदर्शन का स्पष्टीकरण करता है।[२]

उपन्यास का संपूर्ण शिल्प-विधान उसके उद्देश्य पर आधारित मानते हुए एक पाश्चात्य विद्वान् का कथन है-''कथासाहित्य का रचना विधान उद्देश्य पर आधारित है और वह यह बताता है कि विवरणकर्ता का कथा

१. श्रीनारायण अग्निहोत्री : हिन्दी उपन्यास साहित्य का शास्त्रीय विवेचन, पृष्ठ-२०९
२. डॉ. प्रताप नारायण टण्डन : हिन्दी उपन्यास में कथा -शिल्प का विकास, पृष्ठ-१०५

के साथ क्या संबंध है।[१]'' डॉ. देवराज ने उपन्यास का उद्देश्य सामाजिक वर्गों के पारस्परिक संबन्धों और उनकी विभिन्न प्रेरणाओं का यथार्थ सृष्टि से उद्‌घाटन करना माना है।[२]

डॉ. देवीप्रसाद गुप्त ने उपन्यास के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए उसे विज्ञान युग के जीवन की विविधताओं, व्यक्ति जीवन के अन्त:बाह्य द्वन्द्वों, सामाजिक संघर्षों, राष्ट्रीय समस्याओं और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व मानवतावाद की आस्थाओं का उन्मेष, उद्‌घाटन और उन्नयन माना है।[३]

वस्तुत: किसी कथाकार की श्रेष्ठता इसी बात में है कि उसने अपनी कृति के माध्यम से पाठकों को किस सीमा तक सत्य का आभास कराया है तथा उनके नैतिक स्तर को किस सीमा तक ऊपर उठाया है। आम आदमी की आँखों पर पड़े स्वार्थ-भय, चाटुकारिता आदि पर्दे को हटाकर भग्न सत्य के साक्षात् दर्शन कराने में उपन्यासकार जिस हद तक सफल होता है, वही उपन्यास की सफलता कहनी चाहिए। प्रेमचन्द ने ठीक ही लिखा है-

''साहित्यकारों का काम केवल पाठकों का मन बहलाना नहीं है, यह तो भाटों, मदारियों, विदूषकों और मसखरों का काम है। साहित्यकार का पद इससे बहुत ऊँचा है। वह हमारा पथप्रदर्शक है, हमारे मनुष्यत्व को जगाता है, सद्‌भावों का संचार करता है, हमारी दृष्टि को फैलाता है। कम से कम उसका यही उद्देश्य होना चाहिए।[४]''

प्रत्येक साहित्यकार किसी न किसी विशिष्ट उद्देश्य को सामने रखकर ही साहित्य रचना में प्रवृत्त होता है। उपन्यासकार भी उपन्यास का लेखन विशिष्ट उद्देश्यों की सम्पूर्ति हेतु करता है। लेखक इसके माध्यम से अपने दृष्टिकोण को सही तरीके से जनमानस तक पहुँच सकता है। उपन्यास के माध्यम से लेखक समसामायिक घटनाओं को समाज एवं पाठकों की मूलचेतना से संयोजित करने का प्रयत्न करता है। इसी के माध्यम से वह

१. Tery Lubbock - The Graft of Fictions0- page - 251
२. डॉ. देवराज : आधुनिक समीक्षा, कुछ समस्याएँ, पृष्ठ-१३३
३. डॉ. देवीप्रसाद गुप्त : साहित्य सिद्धान्त और समालोचना पृष्ठ-२११
४. हिन्दी उपन्यास : प्रेमचन्द, पृष्ठ-१४१

अतीत को आधार बनाकर वर्तमान की समीक्षा करता है और नवीन भविष्य की संकल्पना प्रस्तुत करता है।

वस्तुत: उपन्यासकार का लक्ष्य ही यही होता कि वह लोकजीवन की समस्याओं का प्रस्तुतीकरण और उनके समाधान का मार्ग प्रशस्त करे। तथा शाश्वत सत्यों की स्थापना के साथ **सत्यं शिवं सुन्दरम्** की अभिव्यक्ति ही मानवीय उपन्यासों का मूल उद्देश्य है, जिसके लिए लेखक कथानक, पात्र, वातावरण, भाषा-शैली की संकल्पना करता है। सफल उपन्यास की वास्तविक कसौटी यही है कि उपन्यासकार अपने उद्देश्य को पाने में किस सीमा तक सफल हो सका है, जिसकी प्राप्ति हेतु वह इतना श्रम करता है।

इसप्रकार उपन्यास प्रत्यक्ष, परोक्ष, तात्कालिक या दूरगामी कई तरह के उद्देश्यों को लेकर लिखा जाता है।

किसी उपन्यास के सृजन के पीछे क्या मूलभूत उद्देश्य रहा है, इसको तो लेखक ही बखूबी जानता है, परन्तु शब्दों के माध्यम से लेखक अपने हार्द को प्रकट कर देता है। **सत्य की खोज** उपन्यास का उद्देश्य समाज व धर्म में अभिव्याप्त अनेक अन्धविश्वासों, रूढ़ियों, कुरीतियों, पाखण्डों, आडम्बरों और अनेक प्रकार की भ्रान्त धारणाओं का शमन और निराकरण कर भ्रमित समाज को एक नया दिशाबोध देना या सत्पथदर्शन कराना है। यही उद्देश्य लेखक को अभीष्ट है।[१]

लेखक ने उपन्यास के पात्रों के माध्यम से वर्तमान समाज के खोखलेपन को उजागर कर, समाज व धर्म का सही स्वरूप प्रतिपादित किया है। लेखक ने बड़े ही कौशलपूर्ण तरीके से तत्समय के सम्भवत: बहुत बड़े सामाजिक विवाद को स्पष्ट किया है। तथा उसका मूलकारण अज्ञान में निहित है, यह भी स्पष्ट किया है।

आलोच्य उपन्यास के माध्यम से लेखक ने कई गलत मान्यताओं, आरोपों, अफवाहों का निराकरण किया है। इस उपन्यास के पीछे लेखक

---

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) सप्तम खण्ड, पृष्ठ-९१

का मूल उद्देश्य यही रहा होगा। लेखक अपने उद्देश्य की सम्पूर्ति में काफी हद तक सफल रहा है। तात्कालिक विवाद को शान्त करने, लोगों को उत्तेजना से दूर शांति के मार्ग में पहुँचने तथा आत्मकल्याण की ओर अग्रसर रहने की प्रेरणा देने में और अंधश्रद्धा के निराकरण में इस उपन्यास का बहुत योगदान है।

वस्तुतः उपन्यास का मूल उद्देश्य कथानक के नायक विवेक के माध्यम से लेखक के शब्दों में-''धर्म के नाम पर न तो मैं समाज को विघटित होते देख सकता हूँ और न ही मुझसे धर्म की कीमत पर संगठन होगा। मैं धर्म को कायम रखकर समाज को संगठित रखूँगा और समाज को संगठित करके धर्म को उसके सामने प्रस्तुत करूँगा, यह मेरा संकल्प है।''

इसके अलावा उपन्यास की भूमिका में स्वयं लेखक ने लिखा है - ''वर्तमान सन्दर्भों में सामाजिक तथ्यों, आध्यात्मिक सत्यों को उजागर करने के लिए ही यह अभिनव प्रयोग किया गया है।''

इसप्रकार से लेखक ने अपने उपन्यास के माध्यम से अपने उद्देश्य को बड़ी संजीदगी, सरलता, सरसता और सहजता से अभिव्यक्त करने की कोशिश की है, जिसमें उसे सफलता भी मिली है। अन्धविश्वासों, पाखण्डों, रूढ़ियों और समाज में धर्म के नाम पर फैले वितण्डावाद को दूर करने रूप उद्देश्य को प्रतिपादित करने में लेखक का प्रयास सराहनीय है। लेखक का प्रमुख उद्देश्य अंधविश्वासों को मिटाना तो है ही, साथ ही जैनदर्शन के गूढ़ सिद्धान्तों, रहस्यों को सरल और संक्षिप्त भाषा में यथार्थ तार्किक शैली में स्पष्ट करना भी लेखक का उद्देश्य है। इसतरह से लेखक अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सफल रहा है।

उपसंहार-

इसप्रकार से डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल का उपन्यास 'सत्य की खोज' औपन्यासिक तत्त्वों की निकष पर पूर्ण रूप से खरा उतरता है। जहाँ इसकी कथावस्तु रोचक और संक्षिप्त है, तो पात्र और चरित्रचित्रण की निदर्शना भी बड़े मनोरम तरीके से हुई है। इसके संवाद भी मार्मिक,

कौतूहलपूर्ण और चुटीले हैं। तथा देशकाल या वातावरण भी कथानक के अनुरूप बन पड़ा है। उपन्यास की भाषा भी मुहावरेदार, सूक्तिमय, अनेकविध शब्दों से युक्त तथा सरल और सरस है। इसकी शैली भी लाक्षणिक, नाटकीय, तार्किक, व्यंग्यात्मक, मनोविश्लेषणात्मक और पात्रानुकूल है। इसीतरह से लेखक अपने उद्देश्य - अंधविश्वास व रूढ़ियों का विरोध, आडम्बरों व ढोंगी साधुओं का विरोध तथा जैनदर्शन के रहस्य का उद्घाटन करने में पूर्ण सफल रहा है।

इसतरह 'सत्य की खोज' औपन्यासिक तत्त्वों की कसौटी पर पूर्ण रूप से खरा उतरता है। इसमें एक सफल उपन्यास के सभी गुण मौजूद हैं।

❖ ❖ ❖

जिनवाणी (मासिक) जयपुर; नवम्बर, १९७७

डॉ. भारिल्ल आध्यात्मिक प्रवक्ता और दार्शनिक रूप में तो प्रसिद्ध हैं ही, इस पुस्तक के द्वारा वे एक सफल कथाकार के रूप में भी सामने आये हैं। नायक विवेक और नायिका रूपमती के माध्यम से लेखक ने एक ओर वस्तुतत्त्व के सत्य स्वरूप का प्रतिपादन कर सम्यक् श्रद्धा का रूप निखारा है तो दूसरी ओर उपासना के क्षेत्र में आई विकृतियों व उनके कारणों पर गम्भीर चिन्तन प्रस्तुत किया है। साथ ही अंधश्रद्धालु जनता को ठगने वाले ढोंगी महात्माओं की खबर ली है। जीव-अजीव, अनेकान्त, भेद-विज्ञान जैसे दुरूह दार्शनिक विषयों को कथा के माध्यम से सुलझाने में लेखक को अच्छी सफलता मिली है। दार्शनिक सूक्तियाँ यत्र-तत्र बिखरी पड़ी हैं। कथा के साथ उनका रहस्य खुलता चलता है और पाठक की औत्सुक्य वृत्ति बराबर बनी रहती है।

- डॉ. नरेन्द्र भानावत, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

तृतीय अध्याय

कहानी के निकष पर समीक्षात्मक परिशीलन

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल की कहानियाँ निश्चित रूप से कहानी के तत्त्वों की कसौटी पर एकदम खरी उतरती हैं। यद्यपि इन कहानियों का प्रमुख कथ्य 'आध्यात्मिकता' है, फिर भी सामाजिक, पारिवारिक, पौराणिक पृष्ठभूमि एवं नैतिक सदाचार, बुद्धि और विवेक जैसे उदात्ततत्त्व भी डॉ. भारिल्ल की कहानियों में समन्वित हैं। सभी दृष्टियों से, चाहे भाषा-शैली हो या उद्देश्य अथवा संवाद या पात्र-योजना, भारिल्लजी की कहानियाँ हर दृष्टि से खरी उतरती हैं।

वस्तुत: किसी भी कहानी की लोकप्रियता या सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह पाठकों को किस हद तक बाँधे रख सकती है। इसके लिए कहानियों के अन्त:बाह्य ढाँचे का सुगठित होना आवश्यक है। कहानियों की श्रेष्ठता का आकलन कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, भाषा-शैली और उद्देश्य- इन छह तत्त्वों के आधार से किया जाता है।

डॉ. भारिल्ल के कहानी संग्रह ''आप कुछ भी कहो'' तथा अन्य फुटकर कहानियों की तात्त्विक दृष्टि से समीक्षा की जा रही है।

१. कहानियों की कथावस्तु एवं घटना संयोजन-

कहानियों में समस्त घटक तत्त्वों की आधारशिला उसकी कथावस्तु होती है। कहानीकार अपने उद्देश्य की सम्पूर्ति हेतु कथावस्तु का सृजन करता है। कथावस्तु विषय की दृष्टि से ऐतिहासिक, सामाजिक अथवा किसी भी प्रकार की हो सकती है, परन्तु उसमें स्वाभाविकता, गतिशीलता- और विश्वसनीयता अनिवार्य है। इसतरह से कोई कहानी सफल है या नहीं- इस बात की प्रथम कसौटी यह है कि कहानी कहनेवाले ने कहानी ठीक-ठीक सुनाई है या नहीं।

कथावस्तु के साथ ही उसमें वर्णित घटनाओं का वही महत्त्व है, जो कि मानव शरीर में रक्तसंचार का है। असंयत और बिखरी हुई घटना

कहानी के प्रभाव को समाप्त कर देती है। अत: एक सफल कहानीकार कहानियों की घटनाओं को इसतरह से संयोजित करता है, जिससे रसधारा प्रवाहित होती रहे।

डॉ. भारिल्ल की कहानियों की कथावस्तु-

डॉ. भारिल्ल की कुछ कहानियाँ पौराणिक हैं, जैनपुराणों पर आधारित हैं, और कुछ कहानियाँ सामाजिक तथा स्वयं लेखक की कल्पनाप्रसूत हैं। लेखक के कहानी संग्रह "आप कुछ भी कहो" में संकलित १० कहानियों में से - आप कुछ भी कहो, अक्षम्य अपराध, जागृत विवेक, अभागा भरत और उच्छिष्ट भोजी - ये पाँच कहानियाँ जैन पुराणों में वर्णित कथानकों को आधार बनाकर लिखी गई हैं, और शेष पाँच कहानियाँ- परिवर्तन, जरा सा अविवेक, गाँठ खोल देखी नहीं, तिरिया-चरित्तर और असन्तोष की जड़ - लेखक की कल्पनाप्रसूत कहानियाँ हैं। इसके साथ ही एक अन्य कहानी 'एक केतली गर्म पानी' भी लेखक ने लिखी है, जो कि प्रगतिवादी विचारधारा से प्रभावित लगती है।[१]

कहानी संग्रह की पहली कहानी **आप कुछ भी कहो** इस तथ्य का उद्घाटन करती है कि महात्मा, बाबा अथवा साधु का वेश धारण करके तथा मामूली जादू को चमत्कार के रूप में दिखाकर कुछ ढोंगी व्यक्ति अपने को सिद्धपुरुष के रूप में प्रचारित करते देखे जाते हैं; परन्तु असली साधुओं का यह काम नहीं है। दूसरी कहानी **अक्षम्य अपराध** की कथावस्तु भी जैन पुराणों पर आधारित है, इसका मूल कथ्य यही है कि साधुओं एवं सत्पुरुषों को अनावश्यक तर्क एवं विवाद से दूर रहना चाहिए। तीसरी कहानी **जागृत विवेक** में व्यक्ति के विवेक और परम्परा के द्वन्द्व और अन्तत: दोनों की विजय का चित्रण है, इसमें लेखक ने पौराणिक चरित्र कथानायक आचार्य धरसेन और उनके दो शिष्यों - पुष्पदंत और भूतबलि का चित्रण किया है।

संकलन की चौथी एवं पाँचवी कहानी **अभागा भरत** एवं **उच्छिष्ट भोजी** एक कहानी के दो भागों में चित्रित की गई प्रतीत होती है। दोनों

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) भूमिका

कहानियों में नायक सम्राट भरत स्वयं को अभागा मानते हैं, जब उनके घर पुत्र का जन्म होता है और सारा जगत भगवान ऋषभदेव की दिव्यध्वनि को श्रवण कर तत्त्वज्ञान का उपदेश सुन रहा होता है। तब, भरत छह खण्डों पर विजय प्राप्त करने के उपरान्त जीती हुई पृथ्वी को उच्छिष्ट मानकर स्वयं को उच्छिष्ट भोजी कहते हैं। संकलन की छठवीं कहानी **परिवर्तन** रूढ़िगदी विचारधारा के भंजक रूप को प्रदर्शित करती है और ''सत्य को समझौते की नहीं, समझने की जरूरत होती है, इस तथ्य का उद्‌घाटन करती है।

'तिरिया चरित्तर' कहानी में एक ओर पुरुषों की शंकालु प्रवृत्ति का चित्रण है तो वहीं दूसरी ओर यह प्रदर्शित किया है कि - ''**प्रशंसा मानव स्वभाव की एक ऐसी कमजोरी है, जिससे बड़े-बड़े ज्ञानी भी नहीं बच पाते हैं।**'' यह कहानी कथावस्तु के साथ ही अन्य सभी तत्त्वों की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ कहानी प्रतीत होती है **'जरा-सा अविवेक'** कहानी मित्रता, प्रेम और हृदय-परिवर्तन के फार्मूले पर आधारित है, जिसमें दो मित्रों - सेठ धनपतराय एवं पण्डित सुमतिचन्द के जीवन के जीवन में एक छोटी-सी घटना से आए भूचाल का चित्रण है। इसका कथा संगठन थोड़ा सा शिथिल है, पर अपने प्रतिपाद्य के प्रतिपादन में लेखक पूर्ण सफल रहे हैं।

'गाँठ खोल देखी नहीं' कहानी व्यक्ति की परदृष्टि को रेखांकित करती है, हमारी दृष्टि के विषय हमेशा परपदार्थ ही होते हैं, स्वयं यदि दृष्टि के विषय बन जाएँ तो जीवन की सम्पूर्ण कातरता समाप्त हो सकती है। यही बात चेतनलाल के जीवन और चरित्र से प्रमाणित करने का लेखकीय प्रयास रहा है।

'असन्तोष की जड़' कहानी जो कि पत्रात्मक शैली में लिखी गई है, जो कि प्रेमचन्द की 'दो सखियाँ' कहानी की याद दिलाती है। यह कहानी नारी-मन के उस पक्ष को गहराई तक अनावृत करती है, जिसके वशीभूत होकर वह अपने पति की सज्जनता, साधुता एवं उसकी परोपकार-वृत्ति को उसकी अपने प्रति उपेक्षा मानकर आत्महत्या तक के लिए उन्मुख हो जाती है।

इन कहानियों के लेखक ने इनके अतिरिक्त एक कहानी और लिखी है। यह स्वप्न कथात्मक शैली में लिखी गई है। **'एक केतली गर्म पानी'** नामक यह कहानी बाल मनोविज्ञान पर आधारित है, जिसमें एक बालक और उसके मन की बात न समझनेवाले शेष परिजनों के बीच उठ खड़े द्वन्द्व को चित्रित किया है।

इसप्रकार से डॉ. भारिल्ल की कहानियों की कथावस्तु सरल, सरस, रोचक, कौतूहलपूर्ण है। निस्सन्देह कथावस्तु तत्त्व की कसौटी पर जब हम इन कहानियों को कसते हैं तो ये कहानियाँ पूर्ण रूपेण खरी उतरती हैं।

कथावस्तु की विशेषताएँ-

कहानी किसी भी प्रकार की हो यदि उसके अपेक्षित गुण उसमें मौजूद हों तो कहानी अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच जाती है। अत: एक सफल कहानी के लिए पहला गुण है कि वह रोचक हो, दूसरा गुण है कि उसकी घटना सम्भाव्य हो तथा तीसरा गुण यह है कि उसमें मौलिकता हो। डॉ. भारिल्ल की कहानियों में ये तीनों ही विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। जहाँ उनकी कहानियाँ रोचक हैं, सम्भाव्य हैं, वहीं उनमें मौलिकता का भी समावेश है। इसतरह से डॉ. भारिल्ल की कहानियों में अच्छी कथावस्तु की सारी विशेषताएँ विद्यमान हैं।

(i) रोचक व मार्मिक कथावस्तु -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों की कथावस्तु अत्यंत रोचक और मार्मिक है। 'तिरिया चरित्तर' कहानी में लेखक ने लिखा है-

"प्रशंसा मानव-स्वभाव की एक ऐसी कमजोरी है कि जिससे बड़े-बड़े ज्ञानी भी नहीं बच पाते हैं। निन्दा की आँच भी जिसे पिघला नहीं पाती, प्रशंसा की ठंडक उसे छार-छार कर देती है।[१]"

तथा-

"बिना डींग हाँके दुर्भाग्य से लड़ने की जितनी क्षमता नारियों में सहज देखी जा सकती है, पुरुषों में उसके दर्शन असम्भव नहीं, तो दुर्लभ तो हैं ही।[२]"

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-६८ २. वही, पृष्ठ-५

इसतरह से डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ अत्यंत मार्मिक एवं रोचक हैं।

(ii) कथावस्तु का सहज विकास -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों का विकास सहज रूप से गतिशील दिखाई देता है, उसमें कोई कृत्रिमता या अवरोध के दर्शन नहीं होते हैं। कहानीकार ने अपनी कहानियों में एक अनुपम नैसर्गिक प्रवाह का समावेश किया है, जिससे ये कहानियाँ अपने मूल उद्देश्य को कहने में सफल हुई हैं। इसप्रकार से डॉ. भारिल्ल की कहानियों की कथावस्तु का विकास आद्यन्त अत्यंत सहज तरीके से हुआ है, जिससे इसमें कभी अकृत्रिमता, उबाऊपन या अन्य किसी भी प्रकार का अवरोध जो कि उस आनन्द में विघ्न करे- दृष्टिगोचर नहीं होता है।

निष्कर्ष-

इसतरह से डॉ. भारिल्ल की कहानियों का कथावस्तु तत्त्व की निकष पर जब हम परिशीलन करते हैं, तो पाते हैं कि इनकी कहानियाँ कथावस्तु तत्त्व की कसौटी पर पूर्ण रूप से खरी उतरती हैं। कथावस्तु तत्त्व के अनुरूप सारी विशेषताएँ इन कहानियों में परिलक्षित होती हैं। अत: कथावस्तु तत्त्व की दृष्टि से इन कहानियों को पूर्ण सफल माना जा सकता है।

2. चरित्र-चित्रण -

चरित्र-चित्रण या पात्रों की दृष्टि से भी डॉ. भारिल्ल की सभी कहानियाँ सफल हैं। इनकी कहानियों में पात्रों की लंबी भीड़ नहीं दिखायी देती, जिससे पात्रों के चरित्र विशेष को उजागर करने में लेखक को पर्याप्त अवसर मिला है, और इसका लाभ उठाते हुए पात्रों के अन्त:बाह्य चरित्र का उद्घाटन डॉ. भारिल्ल ने बखूबी और बड़े ही खूबसूरत ढंग से किया है।

वस्तुत: कहानी में पात्र-योजना या चरित्र-चित्रण का अत्यधिक महत्त्व होता है; क्योंकि कथावस्तु के निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति का माध्यम यही होता है। डॉ. भारिल्ल की कहानियों के पात्रों की सबसे विशेष बात

यह है कि वे पात्र किसी समाज या वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व नहीं करते; अपितु सारे मानव समाज के प्रतिनिधि के रूप में हैं। इसतरह से कहानी के पात्रों का चरित्र उनके अनुरूप बन पड़ा है।

वास्तव में डॉ. भारिल्ल पात्रों के चरित्रों का चित्रण करने वाले कुशल चितेरे हैं। **'अक्षम्य अपराध'** कहानी में डॉ. भारिल्ल वाद-विवाद करने वाले बलि - इत्यादि के चरित्र का उद्‌घाटन करते हुए लिखते हैं-

''अपमानित मानी क्रोधित भुजंग एवं क्षुधातुर मृगराज से भी अधिक दुःसाहसी हो जाता है। आज संघ खतरे में है।[१]''

तथा-

''ऐसा कौन सा दुष्कर्म है, जो अपमानित मानियों के लिए अकृत्य हो।[२]''

डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानियों के पात्रों का चरित्र, चाहे वह अध्यात्म से संबंधित हो, गृह-परिवार या समाज से या फिर राजनीति या बुद्धि विवेक से- सबका चित्रण सजीवरूप से तन्मय होकर किया है। 'तिरिया चरित्तर' कहानी की नायिका के माध्यम से पुरुषों के (नायिका के पति के) चरित्र का उद्‌घाटन करते हुए लेखक कहते हैं -

''देखी आपने पुरुषों की पशुता! स्वयं चाहे हजारों औरतों से सब प्रकार के संबंध रखें, परन्तु स्त्री को किसी से बात करते देख लिया तो हो गये पागल। यह नहीं सोचते कि नारियाँ भी तो पुरुषों के समान ही हाड़-मांस वाली प्राणी हैं।[३]''

डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानियों में विविध प्रकार के पात्रों और चरित्रों का चयन किया है। इन्होंने कहानी संग्रह की पहली कहानी **'आप कुछ भी कहो'** में आचार्य वादिराज को कहानी क। नायक बनाया है, तथा दूसरी कहानी **'अक्षम्य अपराध'** का नायक 'मुनि श्रुतसागर' को माना जा सकता है; क्योंकि सारा कथानक उन्हीं के इर्द-गिर्द घूमता है।

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-१७
१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-१७
२. वही, पृष्ठ-७३

इसीतरह तीसरी कहानी '**जागृत विवेक**' में आचार्य धरसेन को नायक तथा मुनि पुष्पदंत व भूतबलि तथा अप्रत्यक्ष पात्रों के रूप में देवांगनाओं का वर्णन दृष्टिगोचर होता है। इस कहानी में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य का प्रतिपादन किया गया है, कि '**तुम्हारा आत्मा ही तुम्हारा वास्तविक गुरु है।**'

चौथी और पाँचवीं कहानी '**अभागा भरत**' तथा '**उच्छिष्ट भोजी**' के नायक भरत चक्रवर्ती हैं, उनकी वैराग्य प्रवृत्ति के कारण वे छह खण्डों का अधिपति बन जाने पर भी अपने आपको अभागा स्वीकार करते हुए कहते हैं -

''भरत को और चाहे जो कुछ कहें, पर भाग्यशाली नहीं। आज इस अभागे भरत को अपने सौ भाइयों एवं उन नागरिकों के भाग्य से ईर्ष्या हो रही है, जिन्हें आज से ही प्रतिदिन दिन में तीन बार छह-छह घड़ी भगवान ऋषभदेव की दिव्यध्वनि सुनने का अवसर प्राप्त होगा और उसी समय तुम्हारा यह अभागा भरत साम-दाम-दण्ड-भेद की राजनीति में उलझा होगा, युद्ध का संचालन कर रहा होगा।[१]''

छठवीं कहानी '**परिवर्तन**' को आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई कहानी कह सकते हैं, इसमें कहानी के नायक स्वयं अपना चरित्रोद्घाटन करते हुए कहते हैं -

''रोटियों की चिन्ता करनेवाले घर नहीं छोड़ा करते। तुम रोटियों की बात करते हो; जो चिन्तामणि मुझे प्राप्त हुआ है, उसके लिए मैं सम्प्रदाय एवं उसका गुरुत्व तो क्या, चक्रवर्ती की सम्पदा एवं तीर्थंकर जैसा गुरुत्व भी तृणवत् त्याग सकता हूँ। मुझे अशरीरी होने का मार्ग मिल गया है, अब मैं शरीर की क्या चिन्ता करूँ।[२]''

इसतरह से डॉ. भारिल्ल की कहानियों के पात्रों का चरित्र अत्यंत उदात्त है, उच्चादर्शों की पृष्ठभूमि पर आधारित है, और मनोविश्लेषणात्मक है। '**गाँठ खोल देखी नहीं**' कहानी में नारियों की चारित्रिक विशेषता का उद्घाटन करते हुए लेखक ने कहा है-

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-२८
२. वही, पृष्ठ-३०

''सुख-दुःख सहने की जितनी सामर्थ्य नारियों में होती है, उतनी पुरुषों में कहाँ ?[१]''

इसीतरह से लेखक द्वारा लिखित कहानी **'एक केतली गर्म पानी'** भी स्वप्न में आत्मकथात्मक शैली में होने से प्रत्यक्ष रूप से एक ही पात्र दिखलाई पड़ता है।

इसप्रकार हम कह सकते हैं कि चरित्र-चित्रण या पात्र-योजना की दृष्टि से डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ अतीव सफल हैं।

चरित्रों का महत्त्व-

कहानीकार द्वारा लिखी गई कहानी की कथावस्तु का जितना महत्त्व है, उससे कम महत्त्व चरित्र-चित्रण या पात्र-योजना का नहीं है। वस्तुतः चरित्रों की सृष्टि करने के लिए ही कहानीकार कथावस्तु की परिकल्पना करता है। वस्तुतः संवाद या कथोपकथन, भाषा-शैली तथा कहानीकार का मूल उद्देश्य भी पात्रों चरित्रों की संकल्पना द्वारा ही संभव है। अतः कथावस्तु में चरित्रों की अत्यंत महती उपयोगिता है; जिसका सुखद समावेश डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानियों में किया है।

निष्कर्ष -

इसतरह निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि डॉ. भारिल्ल की कहानियों का चरित्र-चित्रण की निकष पर परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि पूर्ण रूप से ये कहानियाँ 'चरित्र -चित्रण' तत्त्व की कसौटी पर पूर्णरूपेण खरी उतरती हैं। चरित्र -चित्रण के मधुर संयोजन से ये कहानियाँ अत्यंत मार्मिक बन पड़ी हैं, जिनसे ये अपने मूल प्रतिपाद्य या कथ्य को पाठकों के सम्मुख अत्यंत सरलता, सरसता, उदात्तता तथा विशदता के साथ प्रस्तुत कर देती हैं। इसतरह डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ चरित्र-चित्रण की दृष्टि से सफल हैं।

३. संवाद (कथोपकथन)-

कथावस्तु और चरित्र -चित्रण की भाँति डॉ. भारिल्ल की कहानियों में संवादों या कथोपकथनों का भी प्रभावी प्रयोग हुआ है । वस्तुतः

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-५६

कहानी को सम्यक् प्रकार से पाठकों तक सम्प्रेष्य करने में संवादों की अत्यंत महती भूमिका होती है; अत: एक सरल कहानी के लिए सशक्त संवादयोजना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। संवादयोजना के बिना पात्रों के चरित्र का विकास सम्भव नहीं हो पाता; क्योंकि संवाद-योजना ही कथावस्तु और पात्रों के चरित्र विकास का माध्यम होती है। पाठक संवादों में ही पात्रों की मानसिक भावभूमि और लेखक की अन्त:चेतना से परिचित होते हैं।

किसी भी कहानी की रोचकता, उद्देश्यपूर्ति के लिए कथोपकथनों का स्तर सुरुचिपूर्ण होना जरूरी है, जिससे कहानी के कथानक को गति मिलती है एवं पात्रों के व्यक्तित्व का परिचय होता है, वहीं वे देश-काल, वातावरण की रोचक प्रस्तुति का माध्यम बनते हैं। अच्छे संवादों के लिए सारगर्भितता, सजीवता, नाटकीयता, सरलता, भावप्रवणता एवं सम्प्रेषणीयता अपेक्षित होती है।[१]

'डॉ. भारिल्ल की कहानियों की संवाद-योजना'

डॉ. भारिल्ल की कहानियों के संवाद स्वाभाविक, संक्षिप्त, प्रभावान्विति से युक्त, प्रासंगिक, उद्देश्यपूर्ण, गतिशील, नाटकीय, चरित्रोद्घाटक और रोचक हैं। कहानीकार ने संवाद-योजना की मार्मिकता से कहानियों के मूलभूत मूल्यों में अभिवृद्धि कर दी है। डॉ. भारिल्ल की कहानियों में निहित संवाद-योजना वैशिष्ट्य को हम इसप्रकार देख सकते हैं -

(i) चरित्रोद्घाटक संवाद -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में चरित्रोद्घाटक संवादों की भरमार है, यथा - **अक्षम्य अपराध** कहानी में -

"इस नादान के अविवेक का परिणाम संघ नहीं भोगेगा। मैं आज उसी स्थान पर रात्रि बिताऊँगा, जहाँ बलि आदि मंत्रियों से मेरा विवाद हुआ था। इसके लिए आचार्यश्री की आज्ञा चाहता हूँ।"

इसीप्रकार से **परिवर्तन** कहानी में देखने पर -

---

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) सप्तम खण्ड, पृष्ठ-८९

''रोटियों की चिन्ता करने वाले घर नहीं छोड़ा करते। तुम रोटियों की बात करते हो, जो चिन्तामणि मुझे प्राप्त हुआ है, उसके लिए मैं सम्प्रदाय एवं उसका गुरुत्व तो क्या, चक्रवर्ती की सम्पदा एवं तीर्थंकर जैसा गुरुत्व भी तृणवत् त्याग सकता हूँ। मुझे अशरीरी होने का मार्ग मिल गया है। अब मैं इस शरीर की क्या चिन्ता करूँ ?''

(ii) संक्षिप्त, सरल संवाद -

इसतरह के संवाद भी डॉ. भारिल्ल की कहानियों में अनेक जगह दृष्टिगोचर होते हैं, जिन्हें हम इसप्रकार देख सकते हैं -

''चक्रवर्ती की आँखों में आँसू शोभा नहीं देते।''

''माँ के सामने भी?''

''बात माँ की नहीं, राजमाता की है।''

तथा -

''क्या आपका यह निश्चय अडिग है ?''

स्वामीजी के मुँह से सहज ही प्ररफुटित हुआ -

अडिग-अडिग-अडिग।''

तथा -

''क्यों, क्या बात है, क्या तबियत ठीक नहीं है ?''

''तबियत तो ठीक है, पर.....''

''पर क्या ?''

(iii) आत्मविश्लेषणात्मक संवाद -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में आत्मविश्लेषक संवाद भी प्रचुरता से उपलब्ध होते हैं। **जरा-सा अविवेक** कहानी में यथा -

''हे भगवान! मेरे जरा से अविवेक ने क्या अनर्थ कर डाला। मैंने एक ज्ञानी की विराधना कर अनन्त ज्ञानियों की विराधना का महापाप तो किया ही, साथ में अपने पति की आन्तरिक शान्ति को भंग कर उनका जीना भी दूभर कर दिया।''

तथा -

''मैं अब बूढ़ा होता जा रहा हूँ, होता क्या जा रहा हूँ , हो ही गया हूँ; पर अभी तक कोई ऐसा पात्र शिष्य दिखाई नहीं दिया, जो गुरु परम्परा से प्राप्त भगवान महावीर की श्रुतपरम्परा को मुझसे पूर्णत: ग्रहण कर सके।''

(iv) मार्मिक संवाद -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में अनेक मार्मिक संवाद उद्घाटित हुए हैं -

''आपने ही तो हमें सिखाया है कि अनुशासन-प्रशासन हृदय से नहीं, बुद्धि से चलते हैं।''

''हम आपके इस आप्तवाक्य को कैसे भूल सकते हैं कि अपराधी को दण्ड देते समय न्यायाधीश को उसके गुणों और उपयोगिता पर ध्यान नहीं देना चाहिए।''

(v) उद्देश्यपूर्ण संवाद -

कहानी के संवाद सोद्देश्य होने चाहिए, निरुद्देश्य संवाद कथावस्तु को बोझिल करते हैं। डॉ. भारिल्ल की कहानियों की संवाद-योजना उद्देश्यपूर्ण है, यथा -

''आज तक सबने अचेतन लालों को ही परखा है, चेतन लालों को नहीं परखा। मैंने तो चेतन लाल को ही परखा, उसी की कीमत बताई थी।''

''आपने मुझे तभी सब-कुछ स्पष्ट क्यों नहीं कहा ?''

''तब कहता तो तुझे विश्वास ही नहीं आता। जब तक स्वयं परखने की दृष्टि न हो तो उधार की बुद्धि से कुछ लाभ नहीं होता।''

इसीप्रकार से **उच्छिष्ट भोजी** कहानी में भी देखा जा सकता है -

''कुछ नहीं, राजमाता की आज्ञा का पालन हो चुका है। आज भरत का भारत अखण्ड है।''

''पर सम्राट का चित्त विभाजित.....।''

''चित्त कोई जमीन नहीं, जिसे बल से, वैभव से, पुण्य-प्रताप से जीत लिया जाये। चित्त को जीत लेनेवालों को छह खण्डों की नहीं, अखण्ड आत्मा की प्राप्ति होती है।''

''तुम्हें क्या हो गया है ?

कुछ भी तो नहीं। ये बातें मात्र बहक नहीं हैं, परम सत्य हैं माँ। अखण्ड आत्मा की उपलब्धि ही जीवन की सार्थकता है।''

(vi) गतिशील संवाद -

कहानियों के संवाद गतिशील होना चाहिए, जिससे कथानक का विकासमार्ग अवरुद्ध न हो और उसके स्वाभाविक विकास में सहायक हो। इसतरह के संवादों से घटित घटना का उद्‌घाटन तथा घट्‌यमान घटना का आभास हो जाता है। डॉ. भारिल्ल की कहानियों में ऐसे संवादों का बाहुल्य है। **आप कुछ भी कहो** कहानी में यथा -

''धर्मवृद्धिरस्तु''

विनत राजश्रेष्ठी का मुख म्लान देखकर ऋषिराज बोले -

''बोलो, क्या बात है ?''

अन्तर में भावों को छिपाते हुए श्रेष्ठीराज कहने लगे -

''कुछ नहीं, बस आपके दर्शन करने ही चला आया हूँ।''

''असमय में आगमन एवं म्लानमुख सब कुछ कह रहा है। छुपाने का प्रयत्न व्यर्थ है, आवश्यक भी नहीं।''

''महाराज छुपाने की तो कुछ बात नहीं, पर.....।''

इसीप्रकार से **जागृत विवेक** कहानी में भी संवादों में पर्याप्त गतिशीलता के दर्शन होते हैं, यथा -

''हमें तुमसे यही उत्तर अपेक्षित था।''

''आचार्यश्री की कृपा के लिए अनुचर अनुगृहीत है।''

दोनों को मंत्र देते हुए आचार्यश्री बोले - ''जाओ, सामने की चोटी पर स्थित गुफा में इन मंत्रों की आराधना करो। मंत्र सिद्ध होने पर सर्वाङ्ग सुन्दर देवाङ्गनाओं के दर्शन होंगे।''

(vii) नाटकीय संवाद -

कहानीकार कथानक में उत्सुकता, रोचकता और गति लाने के लिए नाटकीय संवादों की योजना करता है, जिससे पाठकों की जिज्ञासा

निरन्तर बढ़ती रहती है और कहानी की रोचकता बनी रहती है। पात्र आपस में अभिधा-लक्षणा-व्यंजना की भाषा से प्रसंग विशेष में या घटना विशेष की परिस्थिति में कहे गये संवादों से कहानी के कौतूहल में वृद्धि करते हैं। डॉ. भारिल्ल की कहानियों में ऐसे संवाद प्रचुर मात्रा में समुपलब्ध होते हैं। **असन्तोष की जड़** कहानी में ऐसे कई संवाद हैं, यथा -

''हे भगवान! मैं.....आ.....आज.....तुम्हारी साक्षी.....।''

मैं अपनी बात पूरी भी न कर पाई थी कि पीछे से आवाज आयी -

''भगवान के नाम पर मरनेवाली! जरा ठहरो। भगवान क्या कहता है - तुमने कभी यह भी सोचा है ?''

इसीतरह से **गाँठ खोल देखी नहीं** कहानी में भी देख सकते हैं -

''उपाय तो है, पर बताऊँगा नहीं।''

''क्यों ?''

''क्योंकि यदि तूने नहीं माना तो ?''

''क्यों नहीं मानूँगा ?''

''मानेगा तो वचन दे।''

''दिया।''

''मैं अपनी सारी सम्पत्ति देकर तुझे खरीदना चाहता हूँ, गोद लेना चाहता हूँ। तुझे अपनी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनाना चाहता हूँ।''

इसीप्रकार **तिरिया चरित्तर** जो कि डॉ. भारिल्ल की सर्वश्रेष्ठ कहानी है, उसमें भी ऐसे संवादों का प्रयोग दर्शनीय है -

''पण्डितराज जब अपने काफिले में पहुँचे तो उनके साथी पूछने लगे ''क्या मिला महाराज?''

उन्होंने बहुत संक्षिप्त-सा उत्तर दिया -

''बहुत कुछ, बहुत कुछ नहीं, सब कुछ।''

इसतरह डॉ. भारिल्ल की कहानियों में नाटकीय संवाद देखने को मिलते हैं।

(viii) पात्रानुकूल संवाद -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में पात्रानुकूल संवादों का प्रयोग हुआ है। **तिरिया चरित्तर** कहानी में यथा -

''एक आदमी था, जब उसे छिपा पाया, तभी तो किवाड़ खोलती, जल्दी कैसे खोल देती ?''

उसके उत्तर को मजाक समझते हुए उत्तेजित हो जब उसने यह कहा -

''मजाक करती है, सच क्यों नहीं बताती ?''

''तुम्हें तो सब मजाक ही लगता है, मैं तुमसे क्यों मजाक करने लगी, सच कहती हूँ कि जब आदमी को छिपा पाया, तभी किवाड़ खोले हैं। यदि तुम्हें मेरी बात पर विश्वास न हो तो देख लो, उस सन्दूक में बन्द है।''

तथा -

''ये तिलकधारी सौदागर कहाँ के हैं और इन ऊँटों पर क्या माल लदा है ?''

उनकी अज्ञानता पर हँसते हुए एक बोला -

''ये महाराज तुम्हें सौदागर से लगते हैं ? ये सौदागर नहीं, ब्रह्मज्ञानी पण्डितराज हैं.....पण्डितराज।''

पनिहारिन ने बड़ी उपेक्षा से कहा -

''होंगे, पर इन ऊँटों पर लदा माल क्या है ? हमें तो माल से मतलब.....।''

''इसे तुम माल कहती हो ? यह माल नहीं, शास्तर हैं.....शास्तर, पण्डितराज के लिखे हुए शास्तर हैं।''

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल की कहानियों में पात्रानुकूल संवाद प्रयुक्त किए गए हैं।

निष्कर्ष -

इसतरह से डॉ. भारिल्ल की कहानियों में सरल, संक्षिप्त, मार्मिक, रोचक, नाटकीय, गतिशील, चरित्रोद्घाटक, पात्रानुकूल, उद्देश्यपूर्ण,

मनोविश्लेषणात्मक और व्यंग्यात्मक संवादों का सुन्दर सृजन देखने को मिलता है। इनकी कहानियों में घटना, अवसर और वातावरण के अनुकूल संवादों के साथ ही सारगर्भित और चिन्तनप्रधान संवादों की बहुलता है। कहीं गति लाने वाले छोटे चुटीले संवाद हैं, तो कहीं व्यंजना शक्ति से पूर्ण संवाद निश्चित उद्देश्य की पूर्ति में सहायक बन पड़े हैं।

वस्तुत: डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ कथोपकथन या संवाद-योजना की दृष्टि से अत्यंत सफल हैं। संवाद-योजना तत्त्व की कसौटी पर इनका परिशीलन करने पर ज्ञात होता है कि इनकी कहानियाँ तात्त्विक दृष्टि से पूर्णत: खरी उतरती हैं।

४. देशकाल (वातावरण) -

कहानी के तत्त्वों में इसका भी कम महत्त्व नहीं है। कहानी में देशकाल और वातावरण तथा उनकी परिस्थितियों, परम्पराओं, जीवन-पद्धतियों का जितना बढ़िया चित्रण हो, कहानी में उतनी ही प्रभावोत्पादकता, प्रामाणिकता व सजीवता का समावेश होता है।

सामान्यत: अन्त:बाह्य के भेद से वातावरण दो प्रकार का होता है। आन्तरिक वातावरण में घटनाओं, परिस्थितियों, पात्रों की मानसिक दशाओं, अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण होता है और बाह्य वातावरण का अर्थ, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, प्राकृतिक परिवेश के सूक्ष्म विवेचन से लिया जाता है। जितनी सूक्ष्मता, गहनता, यथार्थता, स्वाभाविकता से इनका चित्रण होगा, कहानी सफलता के मापदण्डों पर उतनी ही खरी साबित होगी।

डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानियों में कहानी के कथ्य के अनुकूल देशकाल और वातावरण की सृष्टि की है इसलिए कहानियाँ और अधिक प्रभावशाली बन पड़ी हैं। कहानीकार ने पौराणिक और सामाजिक वातावरण का दृश्यांकन भी अपनी कहानियों में किया है। यथा -

''विचारों ने आकार ग्रहण किया और 'कानजी मुनि' आध्यात्मिक-सत्पुरुष श्री कानजी स्वामी के रूप में परिवर्तित हो गए। परिवर्तन का यह

समाचार पेट्रोलियम पदार्थ में लगी आग के समान, तूफानी गति से सम्पूर्ण काठियावाड़ में पहुँचा तो स्थानकवासी सम्प्रदाय में खलबली मच गई। नगर-नगर में, गाँव-गाँव में, जहाँ देखो, वहाँ यही चर्चा थी। साम-दाम-दण्ड-भेद से, जैसे भी बने उन्हें वापस लाने के लिए उपक्रम आरम्भ हो गए। वातावरण एकदम उत्तेजित हो गया था। तूफानी उत्तेजना की हिलोरें मर्यादा की सीमा का उल्लंघन करने में तत्पर दिखाई देने लगी थीं।[१]

इसीप्रकार से **उच्छिष्ट भोजी** कहानी में वातावरण का बड़ा सुन्दर चित्रण डॉ. भारिल्ल ने किया है –

"यशस्वती माँ नन्दा आज आनन्दातिरेक में झूम रही थीं। क्यों न झूमतीं, आखिर उनका बेटा छह खण्ड पृथ्वी को जीतकर घर वापस आ रहा था। विश्वविजेता राजाधिराज चक्रवर्ती सम्राट भरत की जय के नारों से आकाश गूँज रहा था। यद्यपि अभी ससैन्य भरत ने अयोध्या में प्रवेश नहीं किया था, तथापि उनके जयघोषों के ध्वनि राजमहल की अट्टालिकाओं में स्पष्ट सुनाई दे रही थी।[२]"

डॉ. भारिल्ल की कहानियों के देशकाल और वातावरण की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनका देशकाल और वातावरण कथावस्तु में रचा-बसा होता है, इसलिए उसमें कहीं भी कृत्रिमता या आरोपित होने का अहसास नहीं होता। इनका वातावरण का चित्रण कथा को गति प्रदान करता है तथा पात्रों के व्यक्तित्व को प्रकाशित करता है। **जरा-सा अविवेक** कहानी में चित्रित वातावरण –

"जैसे-तैसे गर्मी भी समाप्त हुई और सम्पूर्ण जगत् के तन-मन को ठंडक पहुँचाने वाली पावस भी आ पहुँची। प्यासी धरती की प्यास बुझी, तो उसका तन रोमांचित हो उठा, जगह-जगह दूर्वांकुर फूट पड़े।[३]"

इसीप्रकार से **असन्तोष की जड़** कहानी में वर्णित वातावरण को भी देख सकते हैं –

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-३८
२. वही, पृष्ठ-३१
३. वही, पृष्ठ-५१

''अष्टमी की रात थी। चाँद अभी उग ही रहा था। सर्वत्र सन्नाटा था। कभी-कभी पुलिसवाले की सीटी की आवाज अवश्य सुनाई दे जाती थी या फिर एकाध बार कुत्ता भी अपनी जाग्रत अवस्था का परिचय दे जाता था। बीच-बीच में पड़ौसी बुड्ढे की खाँसी रात्रि की निस्तब्धता भंग कर देती थी, किन्तु पड़ौसिन की घर्राहट तो सन्नाटे में मिली हुई सी ही महसूस होती थी।[१]''

''इसीतरह से अन्य कई जगह देशकाल और वातावरण का सुन्दर समावेश डॉ. भारिल्ल की कहानियों में दृष्टिगोचर होता है। **जाग्रत विवेक** कहानी में भारिल्लजी लिखते हैं -

''बात लगभग दो हजार वर्ष पुरानी है। गिरि-गिरनार की गहरी गुफा में अंतर्मग्न आचार्य धरसेन का ध्यान रात्रि के अंतिम प्रहर में जब भग्न हुआ तो वे श्रुत परम्परा की सुरक्षा में चिन्तामग्न हो गए।[२]''

इसीप्रकार से पनघट पर पानी भरती पनिहारिनों के परिवेश का सुन्दर चित्रण डॉ. भारिल्ल ने **तिरिया चरित्तर** कहानी में किया है -

''एक तो पनघट अपने आप में अद्‌भुत स्थल होता ही है, यदि वह पगडंडी के किनारे हो तो फिर क्या कहना ? पनघटों पर होनेवाली चर्चा के रसिक राहगीर जब पानी पीने के बहाने पनघट पर रुककर बिन प्यास के ही पानी पीने की आतुरता व्यक्त करते हैं, पनिहारिनों से पानी पिलाने का अनुरोध करते हैं तो पनिहारिनों को उनकी प्यास का राज समझते देर नहीं लगती है। वे उनकी रसिकता का रस लेती हुईं उन्हें अपने भोले वाग्जाल में ऐसा उलझाती हैं कि उनका सुलझना कठिन हो जाता है।[३]''

इसतरह से डॉ. भारिल्ल की कहानियों में देशकाल व वातावरण का अच्छा समोवश दिखायी देता है।

निष्कर्ष -

सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि वातावरण या देशकाल तत्त्व की निकष पर डॉ. भारिल्ल की कहानियों का परिशीलन करने पर स्पष्ट होता

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-८१
२. वही, पृष्ठ-२१
३. वही, पृष्ठ-६६

है कि देशकाल या वातावरण तत्त्व की कसौटी पर भारिल्लजी की कहानियाँ पूर्णत: सफल हैं। कथावस्तु और पात्रों के अनुरूप भारिल्लजी ने वातावरण की बड़ी सुखद सर्जना की है। कथावस्तु के साथ वातावरण का बड़ा स्वाभाविक, सरस, सुन्दर और सार्थक तथा सोद्देश्य संयोजन इन कहानियों में किया गया है। कहानियों का अन्त:बाह्य वातावरण कथानक के अनुरूप ही प्रस्तुत हुआ है, जिससे कहानियों की सफलता के लिए एक बड़ा आयाम मिला है।

इसतरह वातावरण या देशकाल तत्त्व की कसौटी पर डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ पूर्णत: खरी उतरती हैं।

५. भाषा-शैली –

डॉ. भारिल्ल की कहानियों की भाषा कथावस्तु के अनुरूप है, तो वहीं शैली भी कथावस्तु के प्रतिपादन में सफल है। डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ भाषा-शैली तत्त्व की दृष्टि से पूर्ण सफल हैं, उसका विवेचन इसप्रकार कर सकते हैं –

भाषा –

कहानी की भाषा ही लोक के या पात्रों के विचारों या भावों को व्यक्त करने का एकमात्र माध्यम होती है। सशक्त मार्मिक प्रस्तुति के लिए भाषा सरल, भावानुकूल पात्रों के स्तर के अनुरूप होना चाहिए। भाषा के द्वारा ही कहानीकार के व्यक्तित्व और उसकी अभिव्यक्ति की क्षमता का पता लगता है।

डॉ. भारिल्ल की कहानियों की भाषा साहित्यिक होने के साथ ही सरल, काव्यात्मक और प्रवाहमयी है। इनकी भाषा में तत्सम के साथ ही तद्भव और देशज शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। इसतरह से इनकी भाषा में कहीं भी कृत्रिमता या उबाऊपन नहीं झलकता है। सहज, सरल, प्रवाहयुक्त और उद्देश्यपूर्ति में सहायक भाषा ही लेखक का उद्देश्य रहा है। कई स्थलों पर इनकी भाषा अत्यन्त मार्मिक बन पड़ी है। इनकी कहानियों में प्रयुक्त शब्दों को हम इसप्रकार देख सकते हैं –

(i) तत्सम शब्द –

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में तत्सम शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है, जिससे भाषा की साहित्यिकता और प्रभावशीलता को गति मिलती है, जैसे कुछ तत्सम शब्द जो उनकी कहानियों में प्रयुक्त हुए हैं –

अट्टालिका, मुखारविन्द, प्रस्फुटित, दिगम्बरत्व, अतीन्द्रिय, घनपिण्ड, अश्रुपूरित, दैदीप्यमान, भोजी, तेजोद्दीप्त, नवजात, शिलाखण्ड, मनोगत, क्षुधातुर, विगलित, अलभ्य, अन्तेवासी, गिरा, प्रमेय, वदनाम्बुज, उच्छिष्ट, अभुक्त, भवितव्य, ग्रन्थिभेद – इत्यादि अनेक तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है।

(ii) तद्भव शब्द –

तद्भव शब्द भी डॉ. भारिल्ल की कहानियों में प्रचुरता से प्रयुक्त हुए हैं, यथा –

बुड्ढा, परछाई, चाँद, पली-पुसी, माथा, गुच्छे, गाँठ, भीख, जुगल, सगे, भुनकर, इकलौती, मैल, शास्तर, आँसू।

(iii) देशज शब्द –

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में देशज शब्दों का प्रयोग भी हुआ है, यथा –

घर्राहट, पल्लू, ठहाके, खटखटाहट, रगड़, अटपटा, कानाफूसी, अक्खड़, झिड़क, पण्डिताई, बेगार, डींग।

(iv) अरबी फारसी एवं उर्दू के शब्द –

काफिला, जिन्दादिली, मजाक, सौदागर, बेशकीमती, फरमाइये, काबू, ठहाका, सच, होश, चेहरे, धोखा, हवा, कानाफूसी, कुतुबनुमा, माजरा।

इसतरह से डॉ. भारिल्ल की कहानियों की भाषा में अनेक प्रकार के शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इनकी भाषा में पर्याप्त प्रवाहशीलता दिखलाई पड़ती है।

यथा – "जिसप्रकार आदमी का चेहरा उसके अन्तर का दर्पण कहा जाता है, उसीप्रकार गाँव के पनघट को भी गाँव के अन्तर का दर्पण कहा

जा सकता है। जिसप्रकार हस्तरेखा विशेषज्ञ हाथ की रेखाएँ देखकर आदमी का स्वभाव एवं प्रवृत्तियाँ पहिचान लेता है; उसीप्रकार पनघट पर होने वाले संवादों से गाँव के चरित्र को पहिचाना जा सकता है। पनघट को नारियों की चौपाल ही समझिए।''

इसके साथ ही डॉ. भारिल्ल की कहानियों में भाषा के माध्यम से प्रेरक, हृदयग्राही, शब्दचित्र प्रस्तुत किए गए हैं और वे इतने सजीव हो उठे हैं मानो शब्द ही बोल रहे हों, मूर्तिमान हो उठे हों।

मुहावरेदार, लोकोक्तियों से परिपूर्ण एवं तत्सम, तद्भव, व देशज शब्दों के साथ ही अरबी, फारसी, अंग्रेजी के शब्दों के प्रयोग से भाषा में विविधता के साथ जीवन्तता आ गई है। आलंकारिक भाषा के माध्यम से प्रकृति-चित्रण साकार हो उठा है। इनकी आलंकारिक भाषा का एक अत्यंत मार्मिक चित्र -

''उगते हुए सूर्य के समान दैदीप्यमान कंचनवर्णी काया; अतीन्द्रियानन्द से तृप्त, शान्त, गुरु गम्भीर तेजोद्दीप्त मुखमण्डल; नवजात शिशु के समान निर्विकार नग्न दिगम्बर वीतरागी निर्भय मुद्रा के धारी ऋषिराज के दर्शन कर प्रजा के साथ सम्राट भी जय-जयकार कर उठे।''

इसतरह से डॉ. भारिल्ल की कहानियों की भाषा साहित्यिक, आलंकारिक, काव्यात्मक एवं समासबहुलता तथा समाहार शक्ति से समन्वित स्तुत्य है।

सूक्ति सौन्दर्य -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में विपुल सूक्ति संग्रह देखने को मिलता है। सूक्तियों के चारु प्रयोग से भाषा सौन्दर्य मुखरित हो उठा है, इनकी कहानियों में समागत कुछ सूक्ति वाक्य इसप्रकार हैं -

१. मन्दिर के विकृत हो जाने से उसमें विराजमान देवता विकृत नहीं हो जाते।
२. सहज सरलता के धनी महात्माओं का कुछ भी तो गुप्त नहीं होता।
३. शब्दों की भाषा से मौन की भाषा किसी भी रूप में कमजोर नहीं होती, बस उसे समझने वाले चाहिए।

४. ऐसा कौन सा दुष्कर्म है, जो अपमानित मानियों के लिए अकृत्य हो।
५. अपमानित मानी क्रोधित भुजंग एव क्षुधातुर मृगराज से भी अधिक दुःसाहसी हो जाता है।
६. अनुशासन-प्रशासन हृदय से नहीं, बुद्धि से चलते हैं।
७. अपराधी को दण्ड देते समय न्यायाधीश को उसके गुणों और उपयोगिता पर ध्यान नहीं देना चाहिए।
८. यदि पात्रता हो तो कुछ भी अलभ्य नहीं।
९. तुम्हारा आत्मा ही तुम्हारा वास्तविक गुरु है।
१०. सफलता विवेक के धनी कर्मठ बुद्धिमानों के चरण चूमती है।
११. जगत में ऐसा कौन-सा प्रमेय है, जो सतर्क प्रज्ञा के अगम्य हो।
१२. भावुकता से तथ्य नहीं बदला करते।
१३. सुख-दुख सहने की जितनी सामर्थ्य नारियों में होती है, उतनी पुरुषों में कहाँ।
१४. सत्यासत्य का निर्णय हृदय से नहीं, बुद्धि-विवेक से होता है।

इसप्रकार से डॉ. भारिल्ल की कहानियों की भाषा में विपुल सूक्तियाँ यत्र-तत्र बिखरी पड़ी हैं, जिनसे भाषा और भाव-सौन्दर्य अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचा है।

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल की कहानियों की भाषा सरल, सरस, मार्मिक और कहानियों को सफलता के द्वार तक पहुँचाने वाली है। एक अच्छी भाषा के सभी गुण इन कहानियों में विद्यमान हैं।

शैली -

भारिल्लजी की कहानियों की शैली अत्यंत रमणीय है। वस्तुतः शैली ही लेखक के व्यक्तित्व की संसूचिका होती है। लेखक ने अनेक शैलियों का समावेश अपनी कहानियों में सहज और स्वाभाविक रूप से किया है। इनकी कहानियों की शैली को निम्नानुसार देख सकते हैं -

(i) विवेचनात्मक शैली -

इस शैली का प्रयोग डॉ. भारिल्ल की कहानियों में प्रचुरता से पाया जाता है, यथा - "प्रशंसा मानव स्वभाव की एक ऐसी कमजोरी है कि

जिससे बड़े-बड़े ज्ञानी भी नहीं बच पाते हैं। निन्दा की आँच भी जिसे पिघला नहीं पाती, प्रशंसा की ठंडक उसे छार-छार कर देती है।''

(ii) अलंकृत शैली -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों की शैली अलंकृत है, यथा -

''उगते हुए सूर्य के समान दैदीप्यमान कंचनवर्णी काया; अतीन्द्रियानन्द में मग्न, शान्त, गुरु-गम्भीर तेजोद्दीप्त मुख-मण्डल; नवजात शिशु के समान निर्विकार, नग्न दिगम्बर वीतरागी निर्भय मुद्रा के धारी ऋषिराज के दर्शन कर, प्रजा के साथ सम्राट भी जय-जयकार कर उठे।''

तथा -

''उसका अनुरोध स्वीकार कर, काफिले को वहीं रोक, नीचे गर्दन किए मानो ईर्यासमिति पूर्वक गमन करती, निज मस्तक पर शीतल जलापूरित मंगलकलश धारण किए उस गजगामिनी के चरणचिह्नों पर चलते हुए उसके घर जा पहुँचे।''

(iii) विश्लेषणात्मक शैली -

''पगले, मैंने तो इस चेतनलाल को बेशकीमती बताया था। सो तू ही बता, जिसे छह महीनों में ही असली-नकली की पहिचान हो गयी, वह बेशकीमती लाल है या नहीं। अरे, जीवनभर लाल परखने का धन्धा करने वाले तेरे पिताजी जिसे न परख पाए, उसे तून छह माह में अनुभव से ही परख लिया। तू अपनी शक्ति को तो पहिचान।''

तथा -

''स्वयं से उद्घाटित सत्य जितना लाभदायक होता है, उतना दूसरों के द्वारा उद्घाटित नहीं। समय का भी अपना एक महत्त्व है।''

(iv) वर्णनात्मक शैली -

यह शैली भी डॉ. भारिल्ल की कहानियों में दृष्टिगोचर होती है, यथा-

''आदमी चाहे जितना बड़ा हो जावे, देवता ही क्यों न हो जावे, दुनिया उसके चरण चूमे, पर पत्नी को उसमें कुछ न कुछ कमी नजर आती ही रहती है। सच्चे दिल से वह उसे अपने योग्य स्वीकार नहीं कर पाती।

वह अपनी कल्पना में पति की एक ऐसी काल्पनिक मूर्ति गढ़ लेती है कि जिसकी कसौटी पर आज तक कोई पति खरा नहीं उतर पाया।''

तथा -

''पशु की अपेक्षा यदि इस मनुष्य को कुछ सुविधाएँ प्राप्त हैं, तो असुविधाएँ भी कम नहीं। यदि पशु को पैतृक सम्पत्ति प्राप्त करने की सुविधा नहीं है तो साथ ही परम्पराओं की गुलामी से भी मुक्त है, पर इस सभ्य कहलाने वाले मानव जगत को यदि उत्तराधिकार में सम्पत्ति मिलती है तो साथ में परम्परागत रूढ़ियों की गुलामी भी विरासत में प्राप्त होती है।''

(v) उपदेशात्मक शैली -

इस शैली का प्रयोग भी बहुतायत में डॉ. भारिल्ल की कहानियों में दृष्टिगोचर होता है -

''श्रेष्ठीवर, इतना धर्मानुराग भी ठीक नहीं कि उसके आवेग में आप सत्य का भी ध्यान न रखें। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्ता नहीं है, कुछ भी भला-बुरा नहीं कर सकता। - यह दिगम्बर धर्म का अपमान नहीं, सर्वोत्कृष्ट सम्मान है; क्योंकि वस्तुस्वरूप ही ऐसा है। यह जन-जन की ही नहीं, बल्कि कण-कण की स्वतंत्र सत्ता का महान उद्घोष है।''

(vi) सूत्रात्मक शैली -

''अखण्ड आत्मा की उपलब्धि ही जीवन की सार्थकता है।''

तथा -

''जब तक स्वयं परखने की दृष्टि न हो, उधार की बुद्धि से कुछ लाभ नहीं होता।''

तथा -

''आत्मधर्म तो दर्शन की वस्तु है, उसे प्रदर्शन से क्या प्रयोजन ?''

(vii) हास्य-विनोद शैली -

''ये तिलकधारी सौदागर कहाँ के हैं और इन ऊँटों पर क्या माल लदा है ?''

"उसकी अज्ञानता पर हँसते हुए एक बोला - ये महाराज तुम्हें सौदागर-से लगते हैं ? ये सौदागर नहीं, ब्रह्मज्ञानी पण्डितराज हैं, पण्डितराज।"

(viii) चित्रांकन शैली -

"यशस्वती माँ नन्दा आज आनन्दातिरेक में झूम रही थीं। क्यों न झूमतीं, आखिर उनका बेटा छह खण्ड पृथ्वी को जीतकर घर वापस आ रहा था। विश्वविजेता राजाधिराज चक्रवर्ती सम्राट भरत की जय के नारों से आकाश गूँज रहा था। यद्यपि अभी भरत ने ससैन्य अयोध्या में प्रवेश नहीं किया था, तथापि उनके जयघोषों की ध्वनि राजमहल की अट्टालिकाओं में स्पष्ट सुनाई दे रही थी।"

(ix) तार्किक शैली -

"पर सम्राट का चित्त विभाजित....."

"चित्त कोई जमीन नहीं, जिसे बल से, वैभव से, पुण्य-प्रताप से जीत लिया जाये। चित्त को जीत लेनेवालों को छह खण्डों की नहीं, अखण्ड आत्मा की प्राप्ति होती है।"

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल की कहानियों में विभिन्न प्रकार की शैलियों का समायोजन परिलक्षित होता है। विविध शैलियों के प्रयोग से डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ अत्यन्त मार्मिक बन पड़ी हैं।

निष्कर्ष -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों का भाषा-शैली तत्त्व की निकष पर समीक्षात्मक परिशीलन करने पर स्पष्ट होता है कि ये कहानियाँ भाषा-शैली तत्त्व की कसौटी पर पूर्णरूपेण खरी उतरती हैं। इन कहानियों की भाषा-शैली निस्सन्देह अत्यंत प्राञ्जल है।

६. उद्देश्य -

प्रत्येक कृति के सृज़न के पीछे कुछ न कुछ उद्देश्य अवश्य होता है। लेखक किसी विशिष्ट उद्देश्य को मानस पटल में स्थापित करके तदनुरूप बाह्य संरचना रूप में कथानक की सृष्टि करता है। सामान्यत: लोकरंजन

के साथ ही लोकजीवन की समस्याओं का प्रस्तुतीकरण या किसी विशिष्ट सिद्धान्त को प्रतिपादित करना अथवा अन्य किसी उद्देश्य से कहानीकार कहानी की रचना करता है।

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में निहित उद्देश्य

डॉ. भारिल्ल की कहानियों का मूल उद्देश्य भौतिक धरातल पर अध्यात्म की प्रतिष्ठा करना है, इसके साथ ही पौराणिक पात्रों को नए परिवेश और चिन्तन तथा नूतन सन्दर्भ और दृष्टिकोण से जगत के सामने प्रस्तुत करना भी लेखक का उद्देश्य रहा है।

इसके साथ ही लेखक का उद्देश्य कहानियों के माध्यम से जैनदर्शन के गूढ़ रहस्यों और सिद्धान्तों को भी सरल तरीके से उजागर करना है। वस्तुतः डॉ. भारिल्ल का मूल उद्देश्य तो जैन अध्यात्म को मानव समाज के सामने उद्घाटित करना है। कहानियों की भूमिका में स्वयं लेखक ने कहा है –

''कथानक तो मात्र बहाना है, मूल प्रतिपाद्य तो अध्यात्म ही है।[१]''

वस्तुतः कहानियों के माध्यम से डॉ. भारिल्ल की कुछ कहानियों का उद्देश्य बुद्धि और विवेक की महत्ता और उनकी आवश्यकता को संदर्शित करना है।

कुछ कहानियों का उद्देश्य पारिवारिक एवं सामाजिक संदर्भों की समस्याओं का उद्घाटन करना है। उनके मूल उद्देश्य अध्यात्म को मुखरित और निदर्शन कराने वाली **आप कुछ भी कहो** कहानी का कथन दृष्टव्य है –

''सभी आत्मा स्वयं परमात्मा हैं, परमात्मा कोई अलग नहीं होते। स्वभाव से तो सभी आत्माएँ स्वयं परमात्मा ही हैं, पर अपने आत्मस्वभाव को भूल जाने के कारण दीन-हीन बन रहे हैं। जो अपने को जानते हैं, पहिचानते हैं और अपने में ही जम जाते हैं, रम जाते हैं; वे पर्याय में भी परमात्मा बन जाते हैं।[२]''

१. आप कुछ भी कहो (भूमिका), पृष्ठ-७
२. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-१३

निष्कर्ष -

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल की कहानियों का मूल उद्देश्य जैनदर्शन के परिप्रेक्ष्य में अध्यात्म को प्रतिष्ठित करना, उच्चादर्शों व नैतिकता की स्थापना करना, पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याओं को उजागर करना, बुद्धि और विवेक का महत्त्व प्रतिपादित करना - इत्यादि है।

डॉ. भारिल्ल की कहानियों का उद्देश्य तत्त्व की निकष पर अनुशीलन करने पर हम पाते हैं कि इनकी कहानियाँ उद्देश्य तत्त्व की कसौटी पर पूर्णरूपेण सार्थक और सफल हैं। इसतरह डॉ. भारिल्ल अपने उद्देश्य की सम्पूर्ति में सफल हैं।

उपसंहार -

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल की कहानियों का ''कहानी के तत्त्वों की निकष पर समीक्षात्मक परिशीलन'' करने पर हम पाते हैं कि कहानी के छहों तत्त्वों - कथावस्तु, पात्र या चरित्र-चित्रण, संवाद-योजना, वातावरण, भाषा-शैली और उद्देश्य की दृष्टि से तात्त्विक समीक्षा करने पर इनकी कहानियाँ पूर्ण रूप से खरी उतरती हैं।

इनकी कहानियों की कथावस्तु में मौलिकता, रोचकता तथा मार्मिकता है। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से देखें तो चरित्र-विधान अत्यंत सशक्त है, प्रभावपूर्ण है। संवाद और कथोपकथन की दृष्टि से भी इनके संवाद अत्यंत सरस, रोचक, मार्मिक, कौतूहलपूर्ण, चरित्रोद्घाटक और आकर्षक हैं। इनकी कहानियों का वातावरण भी सजीव हो उठा है। इसीतरह इनकी भाषा भी साहित्यिक, आलंकारिक, सामासिक तथा काव्यात्मक है एवं शैली भी विवेचनात्मक, विश्लेषणात्मक, तार्किक एवं अलंकृत है और उद्देश्य की दृष्टि से भारिल्लजी की कहानियाँ सफल हैं ही।

इसतरह सारांश रूप में कह सकते हैं कि डॉ. भारिल्ल की आलोच्य कहानियों में वे सभी गुण मौजूद हैं, जो कि सफल कहानियों के लिए आवश्यक हैं और तार्किक दृष्टि से भी ये कहानियाँ अत्यन्त सशक्त हैं।

❖ ❖ ❖

चतुर्थ अध्याय

डॉ. भारिल्ल के कथा साहित्य में निहित मूलाभिव्यंजना

मूलाभिव्यंजना से तात्पर्य -

जब कोई साहित्यकार साहित्य रचना में प्रवृत्त होता है, तब उसके मनस्तत्त्व में एक प्रेरिका शक्ति गूढ़ रूप से विद्यमान रहती है, जो उसे साहित्य रचना के प्रति उन्मुख करती है और वही शक्ति एक अस्फुट रूप में उस साहित्य की मूलाभिव्यंजना के रूप से आविर्भूत होती है।

यद्यपि साहित्यकार विभिन्न एवं व्यापक अंतस्थ दृष्टिकोणों से साहित्य रचना की ओर अग्रसर होता है, फिर भी उन दृष्टिकोणों व दृष्टियों के होते हुए भी एक अविच्छिन्न एवं अप्रतिहत धारा उनके मूल में संनिहित होती है और यही धारा उस साहित्य की मूलाभिव्यंजना हुआ करती है।

मूलाभिव्यंजना शब्द मूल + अभि + व्यंजना शब्द से मिलकर बना है। मूल अर्थात् मुख्य या सारतत्त्व या बीजरूप, अभि अर्थात् चारों ओर से, और व्यंजना अर्थात् व्यक्त करना। अर्थात् वह गुण या शक्ति जो सम्पूर्ण साहित्य में व्याप्त होकर एक विशेष उद्देश्य को संनिविष्ट करती है या बोध कराती है, वह मूलाभिव्यंजना कहलाती है।

इसतरह मूलाभिव्यंजना का अर्थ हुआ सारतत्त्व। मूलचेतना, मूलदृष्टि, मूल उद्देश्य और प्राणतत्त्व इसके अपरनाम हैं। अर्थात् साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से जिस कथ्य को प्रतिपादित करना चाहता है, जिस बात को प्रसारित एवं प्रचारित करना चाहता है, वह मूलाभिव्यंजना कहलाती है।

कहानियों में निहित मूलाभिव्यंजना

प्रख्यात दार्शनिक एवं मूर्धन्य मनीषी और आध्यात्मिक कथाकार डॉ. भारिल्ल के कहानी संग्रह ''आप कुछ भी कहो'' में उनकी १० कहानियाँ संकलित हैं, इसके अतिरिक्त पारिवारिक पृष्ठभूमि पर आधारित इनकी

एक और कहानी "**एक केतली गर्म पानी**" है। इन सभी कहानियों का मूल प्रतिपाद्य आध्यात्मिकता का विहंगावलोकन कराने के साथ ही अध्यात्मरूपी क्षीरसागर का पय:पान कराना ही लेखक को अभीष्ट है। कहानीकार अपने कहानी संग्रह "**आप कुछ भी कहो**" की प्रस्तावना में स्वयं मूल प्रतिपाद्य के बारे में लिखते हैं-

"कथानक तो मात्र बहाना है, **मूल प्रतिपाद्य तो अध्यात्म ही है।**[१]"

तथा-

"**कहानियों के कथा-शिल्प, सम्प्रेषण, भाषा-शैली आदि के बारे में मुझे कुछ नहीं कहना है, विषय-वस्तु के संबंध में जो कुछ कहना है, मूलत: तो वह कहानियों में ही कहा गया है; यहाँ तो मात्र यही कहना है कि उस पर जरा ध्यान दें।**[२]"

उपर्युक्त वाक्यांश में कहानीकार ने स्वयं अपनी कहानियों के मूल प्रतिपाद्य का दिग्दर्शन करा दिया है।

इसप्रकार इनकी कहानियों की मूलाभिव्यंजना आध्यात्मिकता है। जिसप्रकार कहानीकार यशपाल और जैनेन्द्र की कहानियाँ मनोवैज्ञानिकता की पृष्ठभूमि पर अवतरित और आधारित हैं; उसीप्रकार डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ आध्यात्मिकता की पृष्ठभूमि पर आधारित हैं।[३] वस्तुत: डॉ. भारिल्ल की कहानियों का मूल प्राणतत्त्व यदि आध्यात्मिकता को कह दिया जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। आध्यात्मिकता के साथ ही, मानवीय संवेदना और सहानुभूति, कर्त्तव्यबोध एवं नैतिक सदाचार, विवेक और बुद्धि, गूढ़ दार्शनिकता एवं मानसिक अंतर्द्वन्द्व - इत्यादि उदात्त मूल्यों की अभिव्यक्ति भी सरल, सुबोध रमणीय एवं तार्किक रूप से हुई है। कहानीकार ने उपर्युक्त सभी मूल्यों की अभिव्यक्ति में अपना हार्द प्रकट कर दिया है।

---

१. आप कुछ भी कहो (भूमिका), पृष्ठ-७
२. वही, पृष्ठ-७
३. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) खण्ड-७, पेज-६

आज जब पाश्चात्य संस्कृति, सभ्यता एवं अंधी आधुनिकता की दौड़ में यह जगत मशगूल और मदमस्त होकर बाह्य चकाचौंध की विभीषिका में अनियन्त्रित होकर प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को विस्मृत कर उससे विमुख होकर उसका ह्रास कर रहा है, तब ऐसे समय में पाश्चात्य संस्कृति, सभ्यता एवं भौतिकवाद के निरोध के लिए आध्यात्मिकता एवं नैतिक धर्म और सदाचार से ओतप्रोत भारिल्लजी की कहानियाँ निस्संदेह अमोघ एवं अचूक औषधि हैं।

जिसप्रकार असीम आकाश में अगणित तारागणों के मध्य शशांक अपनी विभा को बिखेरता है, तथैव भारिल्लजी की कहानियाँ भी अन्य मूलभूत मूल्यों के मध्य आध्यात्मिक मूल्य को ही द्योतित करती हैं। कहानियों के विभिन्न प्रसंगों को देखने से स्पष्ट होता है कि तिल में तेल की भाँति आध्यात्मिकता उनकी कहानियों में सम्पूर्णत: संनिविष्ट है।

आध्यात्मिक चेतना के प्रचेता कहानीकार डॉ. भारिल्ल की कहानियों का संदर्शन करने पर प्रतीत होता है कि उन्होंने आध्यात्मिकता का कोना-कोना झाँका है, उन्होंने रमणीय सरस, सरल, रोचक व आकर्षक भाषा-शैली के द्वारा आध्यात्मिक चेतना का सजीव चित्र उपस्थित किया है।

इसतरह डॉ. भारिल्ल ने आध्यात्मिक चेतना को एक बहुआयाम देते हुए अन्य मूलभूत मूल्यों के साथ संयोजित कर अपनी कहानियों को एक नई दिशा व दृष्टि प्रदान की है। उनकी कहानियों में समागत उनकी मूलाभिव्यंजना उनकी कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं-

जिसप्रकार छायावाद युग के प्रवर्तक कवि जयशंकर प्रसाद ने अपनी पहली कहानी 'आकाशदीप' के नाम पर अपने कहानी संग्रह का नाम 'आकाशदीप' रखा है; उसीप्रकार डॉ. भारिल्लजी ने भी अपनी प्रथम कहानी "आप कुछ भी कहो" के नाम पर ही अपने कहानी संग्रह का नाम भी "आप कुछ भी कहो" रखा है।

पहली कहानी "आप कुछ भी कहो" कहानी में आध्यात्मिक चेतना व्यक्त करने वाला कथन -

''सभी आत्मा स्वयं परमात्मा हैं, परमात्मा कोई अलग नहीं होते। स्वभाव से तो सभी आत्माएँ स्वयं परमात्मा ही हैं, पर अपने आत्मस्वभाव को भूल जाने के कारण दीन-हीन बन रहे हैं। जो अपने को जानते हैं, पहिचानते हैं और अपने में ही जम जाते हैं, रम जाते हैं, समा जाते हैं; वे पर्याय में भी परमात्मा बन जाते हैं।''

तथा-

''जगत के क्रमनियमित परिणमन को ज्ञाता-दृष्टा भाव से स्वीकार कर लेना ही सम्यग्ज्ञान का कार्य है, उसमें हर्ष-विषाद उचित नहीं, आवश्यक भी नहीं।''

तथा -

''मन्दिर के विकृत हो जाने से उसमें विराजमान देवता विकृत नहीं हो जाते।''

इसप्रकार संपूर्ण कहानी आध्यात्मिक चेतना से सारोबार है।

दूसरी कहानी-'अक्षम्य अपराध' में कहानीकार ने आध्यात्मिकता के साथ ही बुद्धि और विवेक को भी अभिव्यंजित किया है, वे लिखते हैं-

''अनुशासन-प्रशासन हृदय से नहीं, बुद्धि से चलते हैं।''

तथा-

''अपराधी को दण्ड देते समय न्यायाधीश को उसके गुणों और उपयोगिता पर ध्यान नहीं देना चाहिए।''

तथा-

''शब्दों की भाषा से मौन की भाषा किसी भी रूप में कमजोर नहीं, बस उसे समझने वाले चाहिए।''

इसप्रकार आध्यात्मिकता के साथ बुद्धि व विवेक आदि मूल्य भी व्यंजित हुए हैं।

तीसरी कहानी- 'जागृत विवेक' में कहानीकार ने आध्यात्मिकता के परिवेश में विवेक के साथ विनय को प्रतिपाद्य बनाया है-

''यद्यपि विवेक का स्थान सर्वोपरि है, किन्तु वह विनय व मर्यादा को भंग करने वाला नहीं होना चाहिए।''

तथा-

''समागत समस्याओं का समुचित समाधान तो स्व-विवेक से ही सम्भव है; क्योंकि गुरु की उपलब्धि तो सदा सर्वत्र सम्भव नहीं।''

तथा-

''तुम्हारा आत्मा ही तुम्हारा वास्तविक गुरु है।''

तथा -

''सफलता विवेक के धनी कर्मठ बुद्धिमानों के चरण चूमती है।''

इसतरह विवेक और विनय आध्यात्मिक मूल्यों के संदर्भ में प्रस्तुत हुए हैं।

चौथी कहानी- जो कि पौराणिक कथानक पर आधारित है, 'अभागा भरत' नामक इस कहानी में आध्यात्मिकता के साथ ही राजनीति के कुशल भाव भी अभिव्यंजित हुए हैं। आध्यात्मिक चेतना की अभिव्यक्ति -

''पर्यायों के क्रमनियमित परिणमन को कौन टाल सकता है? अपने नियतक्रम में घटने वाली घटनाओं को साक्षीभाव से स्वीकार करना ही दृष्टिवन्त का कर्त्तव्य है।''

तथा-

''श्रद्धास्पद सत्य को स्वीकार करने के लिए राग बाध्य नहीं होता।''

कहानीकार ने अपनी सूक्ष्म प्रज्ञा से राजनीति के तथ्य भी उद्घाटित किये हैं।

पाँचवी कहानी - 'उच्छिष्ट भोजी' में कहानीकार ने आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा के साथ वैराग्य को भी अभिव्यंजित किया है, कहानी के नायक सम्राट चक्रवर्ती भरत के माध्यम से कहानीकार कहते हैं-

''चित्त कोई जमींन नहीं, जिसे बल से, वैभव से, पुण्य-प्रताप से जीत लिया जाये। चित्त को जीत लेनेवालों को छह खण्डों की नहीं, अखण्ड आत्मा की प्राप्ति होती है।''

तथा-

''अखण्ड आत्मा की उपलब्धि ही जीवन की सार्थकता है।''

इसके साथ ही इस कहानी में संसार की नश्वरता, क्षणभंगुरता दिखलाना भी कहानीकार को अभीष्ट है।

छटवीं कहानी- 'परिवर्तन' में कहानीकार ने अभिव्यक्त किया है कि परम्परा से प्राप्त मान्यताएँ तोड़ना बहुत कठिन है; क्योंकि उन्हें छोड़ने पर, उनसे दूर होने पर उसके अनुयायी व समाज उसके विरुद्ध हो जाते हैं।

''पशु की अपेक्षा यदि इस मनुष्य को कुछ सुविधाएँ प्राप्त हैं, तो असुविधाएँ भी कम नहीं। यदि पशु को पैतृक सम्पत्ति प्राप्त करने की सुविधा नहीं है, तो साथ ही वह परम्पराओं की गुलामी से भी मुक्त है, पर इस सभ्य कहलाने वाले मानव जगत को यदि उत्तराधिकार में सम्पत्ति मिलती है तो साथ में परम्परागत रूढ़ियों की गुलामी भी विरासत में प्राप्त होती है।''

सातवीं कहानी- 'जरा-सा अविवेक' में कहानीकार ने अभिव्यंजना की है कि जरा सी भूल या अविश्वास हमारे प्रगाढ़ संबंधों में भी दरार पैदा कर देता है। वस्तुतः इस कहानी में संवेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति देखने को मिलती है।

''हे भगवान! मेरे जरा से अविवेक ने क्या अनर्थ कर डाला? मैंने एक ज्ञानी की विराधना कर अनन्त ज्ञानियों की विराधना का महापाप तो किया ही, साथ में अपने पति की आंतरिक शान्ति को भंग कर उनका जीना दूभर कर दिया।''

तथा-

''शरीर का घाव तो समय पाकर भर जाता है, पर मन के घाव का भरना सहज नहीं होता।''

आठवीं कहानी 'गाँठ खोल देखी नहीं' कहानी का मूल प्रतिपाद्य यही है कि हम हीरे, मोती-इत्यादि जड़-चीजों को ही लाल समझते हैं, पर आत्मा जो कि जीव है उसको कोई भी लाल (रत्न) मानने को तैयार नहीं है। इसीप्रकार इस कहानी में आध्यात्मिकता के साथ दर्शन की गूढाभिव्यंजना उद्दीप्त हुई है।

यथा-

''आज तक सबने अचेतन लालों को ही परखा है, चेतन लालों को नहीं परखा। मैंने तो चेतनलाल को ही परखा था, उसी की कीमत बताई थी।''

तथा-

''सड़कों पर गलियों में घूमते दर-दर की ठोकर खाते चेतन लालों की कीमत आज किसको है ? कमी लालों की नहीं, उन्हें सम्हालने वालों की है, पहिचानने वालों की है। दूसरों की बात जाने दीजिए, हम स्वयं लाल हैं, पर अपने को पहिचान नहीं पा रहे हैं।

नौवीं कहानी- 'तिरिया चरित्तर' है का मूल प्रतिपाद्य यही है कि मात्र शास्त्रज्ञान से कुछ नहीं होता, जबतक कि वह हमारे व्यावहारिक जीवन और आचरण में अवतरित न हो। इसके साथ ही इसमें नारियों के स्वभाव की ओर भी संकेत किया गया है यथा -

''हम शास्त्रों का अध्ययन करें ही नहीं- मैं यह नहीं कहना चाहती, पर सम्पूर्णत: उन पर ही निर्भर हो जाना उचित नहीं है, हमें अपने ज्ञान को वस्तुनिष्ठ बनाना चाहिए। किसी भी वस्तु के बारे में अंतिम निर्णय पर पहुँचने से पहले पोथियों में उसके बारे में क्या लिखा है- यह जानने के साथ-साथ उस वस्तु का अवलोकन भी आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है।''

दसवीं कहानी- 'असन्तोष की जड़' जो कि पत्रशैली में लिखी गई है, इसकी मूलाभिव्यंजना यही है कि हमें सामने आयी हुई विपत्तियों का सामना करना चाहिए न कि उनसे पलायन करना या आत्महत्या करना। इसप्रकार इसमें भी आध्यात्मिकता का ही समावेश है।

निष्कर्ष -

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल की कहानियों की मूलाभिव्यंजना आध्यात्मिक चेतना होते हुए भी उनमें मानवीय संवेदना, विवेक और बुद्धि, नैतिक सदाचार और कर्त्तव्य बोध आदि मूल्यों का समावेश है। वस्तुत: ये कहानियाँ अध्यात्म के दिग्दर्शक सजीव चित्र हैं, जो कहानीकार की अनुपम कल्पना सृजन शक्ति के माध्यम से कहानी रूप में अवतरित हुए

हैं। कहानीकार की प्रस्तुत मूलाभिव्यंजना आज के भौतिक समय में नितान्त उपयोगी है।[1]

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में निहित मूलाभिव्यंजना –

प्रख्यात निरवद्य अध्यात्मवेत्ता और तार्किकचूड़ामणि डॉ. भारिल्ल का उपन्यास **''सत्य की खोज''** शाश्वत सत्यों का सर्जक, दिग्दर्शक और धर्म के नाम पर समाज में प्रचलित अंधविश्वासों, रूढ़ियों, पाखण्डों और अनेक अंधश्रद्धाओं पर कुठाराघात करनेवाला ब्रह्मास्त्र है।[2] वस्तुतः इस उपन्यास का मूल प्रतिपाद्य भी धर्म व समाज में व्याप्त कुरीतियों व अंधविश्वासों को जड़ से उखाड़ फेंकना है। जैसा कि 'सत्य की खोज' उपन्यास के इस नाम से ही प्रस्फुटित होता है कि उपन्यासकार सत्य व तथ्य का रहस्योद्घाटन करना चाहता है।

वस्तुतः इस उपन्यास की मूलाभिव्यंजना या प्राणतत्त्व, समाज को धर्म के नाम पर प्रचलित रूढ़ियों, आडम्बरों, पाखण्डों, चमत्कारों, अंधविश्वासों और तथाकथित ढोंगी साधुओं के चंगुल से विमुक्त कर तर्क की कसौटी पर सत्य के धरातल पर प्रतिष्ठित कर आध्यात्मिक चेतना का उन्नयन करना है। प्रस्तुत उपन्यास में उपन्यासकार डॉ. भारिल्ल ने सरल, सरस,रोचक, आकर्षक, कौतूहलपूर्ण व तार्किक कथानक के माध्यम से समाज को अंधविश्वासों के दलदल से उबारकर एक नई दिशा दी है।[3] चूँकि उपन्यासकार का मत है कि साहित्य समाज का दिग्दर्शक, उत्थान और उत्कर्ष करने वाला होना चाहिए। वे लिखते हैं–

''साहित्य को समाज का दर्पण भी कहा जाता है, पर यह नहीं भूलना चाहिए कि साहित्य मात्र दर्पण नहीं, दीपक भी है, मार्गदर्शक भी है, प्रेरक भी है। जो साहित्य प्रकाश न बिखेरे, मार्गदर्शन न करे, सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा न दे, मात्र वर्तमान समाज का कुत्सित चित्र प्रस्तुत करे या मनोरंजन तक सीमित रहे, वह साहित्य साहित्य नहीं, साहित्य के नाम पर कलंक है।[4]''

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ) खण्ड-७, पेज-६
२. श्रमण (मासिक) वाराणसी, दिसम्बर, १९७७
३. सन्मति वाणी (मासिक) इन्दौर, अक्टूबर, १९७७
४. आप कुछ भी कहो (भूमिका) पृष्ठ-२

उपर्युक्त कथनानुसार ''सत्य की खोज'' नामक उपन्यास में वस्तु सत्य का मार्मिक उद्‌घाटन है। जहाँ इसमें एक ओर समाज में परिव्याप्त धार्मिक व सामाजिक कुरीतियों पर करारा व्यंग्य करते हुए मनोवैज्ञानिक तरीके से सत्य व तर्क के द्वारा वज्राघात किया है, वहीं धर्म व समाज के सच्चे स्वरूप को स्पष्ट किया है। इसीतरह समाज व धर्म को गुमराह करने वाले तथाकथित समाज व धर्म के ठेकेदारों, और स्पष्ट शब्दों में कहें तो ढोंगी साधुओं जो कि मिथ्या तंत्र-मंत्र-इत्यादि के द्वारा चमत्कार प्रदर्शन करके समाज में पाखंड व अंधश्रद्धा को वृद्धिंगत करते हैं, लोगों को मूर्ख बनाकर अपना उल्लू सीधा करते हैं, उनके चंगुल से लोगों को मुक्त कराने के लिए भी भारिल्लजी ने सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की है। इसके साथ ही धर्म और समाज के बारे में भी मार्मिक भाव अभिव्यक्त हुए हैं।

उपन्यासकार का मत है कि यदि हम बुद्धि व तर्क की कसौटी पर रखकर किसी बात को स्वीकार करेंगे तो अयथार्थ बातें हमसे दूर ही रहेंगी-

''तर्क की कसौटी पर सर्वथा असत्य उतरने वाली ऐसी मूर्खतापूर्ण अफवाहें सामान्यजनों को ही आकर्षित कर पाती हैं। थोड़ी सी भी बुद्धि रखनेवाले विवेकीजन इनके चक्कर में नहीं पड़ते।''

उपन्यासकार अंधविश्वासों व आडम्बरों से दूर रहनेवाले कथानक के नायक विवेक के बारे में लिखते हैं-

''पर विवेक कुमार को यह सब पसंद न था। वह नहीं चाहता था कि उसकी शादी के नाम पर व्यर्थ का आडम्बर और बर्बादी की जाए। वह यह भी नहीं चाहता था कि कन्या के पिता पर व्यर्थ ही बलात् आर्थिक बोझ डाला जाए।''

उपन्यासकार ने कुल से प्राप्त धर्म को धर्म नहीं माना है; उसके अनुसार धर्म वही है, जो विवेकपूर्वक स्वीकार किया जाये-

''धर्म परम्परा नहीं, स्वपरीक्षित साधना है। धर्म का कुल से क्या सम्बन्ध? धर्म का सम्बन्ध तो निज विवेक से है।''

तथा-

''धर्म तो व्यक्तिगत विश्वास है, जो विवेकपूर्वक स्वीकार किया जाता है।''

उपन्यास में आध्यात्मिकता की छटा भी विद्यमान है-

''यह आत्मा दूसरों को सुधारने के निरर्थक प्रयत्न में जितनी शक्ति और समय नष्ट करता है; यदि उसका शतांश भी अपने को सुधारने में लगाए तो यह पूर्ण सुखी हुए बिना न रहे।''

समाज में यह भी एक अंधश्रद्धा है कि लोग चमत्कार को नमस्कार करते हैं, परन्तु उपन्यासकार इससे असहमत होते हुए चिर सत्य लिखते हैं-

''कपोलकल्पित चमत्कारों की बढ़ा-चढ़ाकर चर्चा करना भगवान का बहुमान नहीं, भक्ति नहीं, स्तुति नहीं; वरन् उनमें विद्यमान वीतरागता सर्वज्ञता, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य आदि गुणों का चिन्तवन, बहुमान ही वास्तविक भक्ति है।''

वस्तुतः समाज में व्याप्त पाखण्डों, कुरीतियों व अंधविश्वासों से समाज इसलिए दूर नहीं हो पाता है; क्योंकि हमें उन चीजों में अंधश्रद्धा है और उपन्यासकार के अनुसार-

''अंधश्रद्धा तर्क स्वीकार नहीं करती। यही कारण है कि अंधश्रद्धालु को सही बात समझा पाना असंभव नहीं तो कष्टसाध्य अवश्य है। यदि वह तर्कसंगत बात को स्वीकार करने लगे तो फिर अंधश्रद्धालु ही क्यों रहे ?''

उपन्यासकार डॉ. भारिल्लजी ने अभिव्यंजित किया है कि हम पाखण्डों और अन्धविश्वासों के पीछे इसलिए भाग रहे हैं; क्योंकि हमारी उन पर श्रद्धा है-

''जिसके प्रति श्रद्धा होती है, उसे व्यक्ति सर्वस्व समर्पण करने के लिए तैयार हो जाता है।''

तथा-

''श्रद्धा का लुटेरा ही सबसे बड़ा लुटेरा है।''

उपन्यासकार धर्म के नाम पर फैलने वाले ढोंग का कारण श्रद्धा को बतलाते हुए कहते हैं-

'श्रद्धा लूटने के लिए बहुत कुछ करना होता है; क्योंकि इसके बिना किसी की भी श्रद्धा लूटना संभव नहीं है। धर्म के नाम पर ढोंग के प्रचलन का मूल केन्द्रबिन्दु यही है।''

उपन्यासकार ने लिखा है कि जबतक नारियाँ शिक्षित नहीं होंगी; तब तक उन्हें अंधविश्वासों से बचाना नामुमकिन है-

''जबतक सहज श्रद्धालु नारी जाति शिक्षित नहीं होगी, उसे ढोंगी साधुओं और धूर्त महात्माओं से बचाना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।''

उपन्यासकार इन अंधविश्वासों को रोकने के बारे में लिखते हैं-

''जगत में कोई खोटा सिक्का चलाए तो उसे रोकना अपने बस की बात नहीं है, पर अपनी तिजोरी में खोटा सिक्का न आ जाए, इसका ध्यान तो रखना ही पड़ता है।''

उपन्यासकार कहते हैं कि हमें इन अंधविश्वासों से बचने के लिए बुद्धि-विवेक का सहारा लेना पड़ेगा, क्योंकि-

''बिना विवेक के श्रद्धा अंधी होती है, गुण-दोष का निर्णय करना विवेक का काम है।''

तथा-

''विवेक के बिना मनुष्य जहाँ भी जाएगा, ठगा जाएगा; क्योंकि सत्यासत्य का निर्णय करना विवेक का काम है।''

इसीप्रकार धर्म व समाज के बारे में डॉ. भारिल्ल लिखते हैं-

''धर्म के लिए सत्य जरूरी है और समाज के लिए संगठन।''

तथा-

''धर्म के नाम पर न तो मैं समाज को विघटित होते देख सकता हूँ और न मुझसे धर्म की कीमत पर संगठन ही होगा। मैं धर्म को कायम रखकर समाज को संगठित करूँगा और समाज को संगठित रखकर धर्म को उसके सामने प्रस्तुत करूँगा।''

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में अंधविश्वासों, धर्म के नाम पर समाज में व्याप्त पाखण्डों और कुरीतियों पर सशक्त प्रहार किया गया है, यही इसका प्राणतत्त्व और मूल प्रतिपाद्य है।

❖ ❖ ❖

पंचम अध्याय

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के कथानकों का विषय वैविध्य

डॉ. भारिल्ल के कथा साहित्य में अनेक विषयों का समावेश है, इन्होंने विभिन्न विषयों को अपने कथासाहित्य में समाहित किया है। चूँकि कोई भी कथाकार जब भी किसी कथानक की रचना में प्रवृत्त होता है तो वह किसी न किसी विषय को अपने कथानक के माध्यम से प्रस्तुत करता है, वह विषय कुछ भी हो सकता है, किसी भी प्रकार का हो सकता है। कथाकार उस विषय विशेष को अपनी कल्पना से किसी सुंदर कथानक में अंतर्निहित करके समाज के सामने परोसता है।

डॉ. भारिल्ल ने भी अपने कथानकों में विविध विषयों को उठाया है, इनके विषय-वैविध्य का हम दो भागों में विवेचन करेंगे-

(क) डॉ. भारिल्ल की कहानियों में।

(ख) डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में।

(क) डॉ. भारिल्ल की कहानियों का विषय-वैविध्य -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में अनेक विविधताएँ दृष्टिगोचर होती हैं, चाहे वे विधा की अपेक्षा हों या फिर विषय-वस्तु की अपेक्षा। विधा की अपेक्षा देखें तो सामान्य गद्य शैलीं के अलावा आत्मकथात्मक शैली तथा पत्रात्मक शैली में भी इन्होंने कुछ कहानियाँ लिखी हैं। उदाहरणस्वरूप **''असन्तोष की जड़''** पत्रात्मक शैली की तथा **''परिवर्तन''** आत्मकथानक शैली की कहानियाँ कही जा सकती हैं।

विषय-वस्तु की अपेक्षा से देखें तो डॉ. भारिल्ल ने विविध विषयों को लेकर कहानी साहित्य पर अपनी कलम चलाई है। अनेक उदात्तभाव और नैतिक मानवीय मूल्य इनकी कहानियों में व्याप्त हैं। इनकी कहानियाँ आध्यात्मिकता, दार्शनिकता, नैतिकता, सामाजिकता, ऐतिहासिकता, वैज्ञानिकता - इत्यादि पर आधारित हैं। कई कहानियों में एक ही विषय

प्रमुख रूप से मुखरित हुआ है, तो कई कहानियों में दो-तीन विषय एक साथ संयोजित हैं।

इन्होंने कहानियों की विषय-वस्तु को अत्यंत संजीदगी, सरसता, तार्किकता, सरल तथा सूक्तिमय भाषा-शैली के माध्यम से प्रस्तुत किया है। उपर्युक्त विविधताओं को हम सोदाहरण इसप्रकार देख सकते हैं-

1. **आध्यात्मिकता** -

डॉ. भारिल्ल की अधिकांश कहानियाँ आध्यात्मिकता को लेकर लिखी गई हैं, उनकी 'आप कुछ भी कहो' कहानी परिपूर्ण रूप से आध्यात्मिकता के लिये समर्पित है। इनकी कहानियों में अध्यात्म का प्रचुर व प्रभूत तत्त्व दृष्टव्य है-

''सभी आत्मा स्वयं परमात्मा हैं, परमात्मा कोई अलग नहीं होते। स्वभाव से तो सभी आत्माएँ स्वयं परमात्मा ही हैं, पर अपने परमात्मस्वभाव को भूल जाने के कारण दीन-हीन बन रहे हैं। जो अपने को जानते हैं, पहिचानते हैं और अपने में ही जम जाते हैं, रम जाते हैं, समा जाते हैं; वे पर्याय में भी परमात्मा बन जाते हैं।[१]''

कहानीकार ने सिद्ध किया है कि सभी आत्माएँ एक समान हैं, अपने कर्मों का स्वयं ही भोक्ता है, तथा कोई भी किसी अन्य व्यक्ति का भला-बुरा नहीं कर सकता है-

''जब सभी परमात्मा हैं तो फिर कौन छोटा, कौन बड़ा? सभी समान ही हैं। अपने भले-बुरे का उत्तरदायित्त्व प्रत्येक आत्मा का स्वयं का है। कोई किसी का भला-बुरा नहीं कर सकता है।[२]''

कहानीकार का मन्तव्य है कि इस दृश्यमान् जगत में जो कुछ भी हो रहा है, वह क्रमबद्ध है, एक निश्चित क्रम के अनुसार हो रहा है। जैसे किसी फिल्म के सभी दृश्य पूर्व निश्चित रहते हैं कि किस दृश्य के बाद कौन दृश्य आयेगा; उसीप्रकार प्रत्येक पदार्थ की अवस्थाओं का क्रम भी निश्चित है। वे **'अभागा भरत'** नामक कहानी में लिखते हैं-

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-१३
२. वही, पृष्ठ-१३

''पर्यायों के क्रमनियमित परिणमन को कौन टाल सकता है ? अपने नियतक्रम में घटनेवाली घटनाओं को साक्षीभाव से स्वीकार करना ही दृष्टिवन्त का कर्त्तव्य है।[१]''

कहानीकार डॉ. भारिल्ल का मत है कि हम अपने मन को बल या वैभव से नहीं जीत सकते हैं, यदि हमें अपने चित्त (मन) को जीतना है तो उसे स्वयं के आत्मतत्त्व से जीतना होगा। वे ''उच्छिष्ट भोजी'' कहानी में लिखते हैं-

''चित्त कोई जमीन नहीं, जिसे बल से, वैभव से, पुण्य-प्रताप से जीत लिया जाये। चित्त को जीत लेने वालों को छहखण्डों की नहीं, अखण्ड आत्मा की प्राप्ति होती है।[२]''

कहानीकार ने जीवन की सार्थकता अध्यात्म या आत्मतत्त्व की उपलब्धि को ही माना है, वे अध्यात्म रस से सरोबार होकर लिखते हैं-

''अखण्ड आत्मा की उपलब्धि ही जीवन की सार्थकता है।[३]''

वस्तुतः कहानीकार का मूल उद्देश्य भी भौतिक जगत के ऊपर अध्यात्म की प्रतिष्ठा करना ही है; उन्होंने आत्मोन्नति, आत्मपरिष्कार, आत्मानुभव और आत्मसाक्षात्कार पर बल दिया है; क्योंकि वस्तुतः जब तक व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार नहीं करेगा, अपने आत्मस्वरूप से परिचित नहीं होगा; तबतक वह इस भौतिक दुःखों से मुक्त नहीं हो सकता है और भौतिक या सांसारिक दुःखों से मुक्ति ही कहानीकार का उच्चादर्श है, अभीष्ट है। जहाँ सारे संसार में मानवीय भावों का ह्रास हो रहा है, ऐन्द्रिय भोग और वासना की कुप्रवृत्तियाँ सुरसा के मुँह की तरह नित प्रति वृद्धिंगत हो रही हैं, लोग सांसारिक सुख भोग के पीछे भाग रहे हैं- ऐसे परिवेश से जनसामान्य को मुक्ति दिलाने के लिए ये आध्यात्मिक कहानियाँ डॉ. भारिल्ल का उच्चतम निदर्शन है।

जब अध्यात्म की दृष्टि से देखते हैं तो यह देह पंच भूत तत्त्वों से निर्मित विनश्वर तथा आत्मा ही शाश्वत सिद्ध होता है। कहानीकार शरीर के बारे में लिखते हैं -

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-१४
२. वही, पृष्ठ-३२
३. वही, पृष्ठ-१५

''यह तो जड़ पुद्गल का परिणमन है। इससे हमारा क्या लेना-देना? जबतक संयोग है, तबतक रहेगा। पुण्य-पाप के अनुसार इसका जैसा परिणमन होना होगा, होता रहेगा। हम तो इससे भिन्न ज्ञान के घनपिण्ड, आनन्द के कन्द चेतन तत्त्व हैं, उसमें ही मग्न रहते है।[१]''

कहानीकार के अनुसार बाह्य शरीर के अच्छे या बुरे होने से, कुछ भी फर्क आत्मा पर नहीं पड़ता है। शरीर के विकृत हो जाने पर, कुरूप हो जाने पर भी आत्मा का सौन्दर्य नष्ट नहीं होता है; क्योंकि शरीर और आत्मा एक साथ दिखाई देने पर भी वस्तुत: भिन्न-भिन्न हैं। जैसे किसी सरोवर के जल की सतह पर व्याप्त काई (शैवाल) के कारण वह जल मलिन प्रतीत होता है; परन्तु उस शैवाल (काई) के हटाने पर उसके अंदर पूर्ण स्वच्छ जल विद्यमान रहता है; इसीप्रकार इस दृश्यमान शरीर में कोढ़ इत्यादि व्याधियाँ हो जाने पर भी आत्मा उससे अलिप्त ही रहता है। 'आप कुछ भी कहो' कहानी में वे ऋषिराज के माध्यम से कहते हैं -

''हम नहीं, हमारी देह (शरीर) अवश्य कोढ़ी थी। हम तो देह-देवल (देवालय) में विराजमान भगवान आत्मा हैं, आप भी देह-देवल में विराजमान भगवान आत्मा ही हैं।''

तथा -

''मन्दिर के विकृत हो जाने से उसमें विराजमान देवता विकृत नहीं हो जाते।[२]''

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में वर्णित आध्यात्मिकता वस्तु सत्य की निकष पर मुखरित हुई है। उन्होंने इस बात का प्रबल रहस्योद्घाटन किया है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्ता नहीं है, कोई किसी का भला-बुरा भी नहीं कर सकता है; क्योंकि जो कुछ भी होता है, स्वतंत्र रूप से होता है तथा हमें जो भी सुख या दुख प्राप्त होते हैं, वे हमें अपने द्वारा किये कर्मों के परिणामस्वरूप ही प्राप्त होते हैं। यह आत्मा अपने कर्मों का स्वयं ही

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-१५
२. वही, पृष्ठ-१५

कर्ता-भोक्ता है तथा प्रत्येक कण-कण स्वाधीन है, कोई किसी के अधीन नहीं है और न ही पराधीन हो सकता है।

डॉ. भारिल्ल ने अध्यात्म और धर्म को सत्य व तथ्य की कसौटी पर ही स्वीकार किया है, वे कहानी में लिखते हैं -

''श्रेष्ठीवर! इतना धर्मानुराग भी ठीक नहीं कि उसके आवेग में आप सत्य का भी ध्यान न रखें।[१]''

इसप्रकार से डॉ. भारिल्ल की कहानियों में अध्यात्म प्रमुख विषय के रूप में हमारे सामने उभरा है। इन्होंने अपनी कहानियों के कथानक को आध्यात्मिकता के परिवेश में रंगकर कहानी साहित्य को एक नई दिशा दी है। इसतरह अध्यात्म तत्त्व डॉ. भारिल्ल की कहानियों में विस्तृत रूप से देखने को मिलता है।

२. दार्शनिकता -

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में दार्शनिकता का भी सुन्दर समावेश है। दर्शन का समीचीन विवेचन भी हम इनकी कहानियों में पाते हैं। जैनदर्शन का विवेचन प्रचुरता से इनकी कहानियों में हुआ है, साथ ही दर्शन से संबंधित अन्य तथ्यों का विश्लेषण इनकी कहानियों में दृष्टिगोचर होता है। पुण्य-पाप का विवेचन भी इसमें दिखाई देता है।

जैनदर्शन की मान्यतानुसार पुण्य और पाप दोनों ही बेड़ियों के समान हैं; क्योंकि जिसप्रकार से बेड़ियाँ बाँधने का ही काम करती हैं, चाहे वे सोने की हों अथवा लोहे की। उसीप्रकार से पुण्य व पाप दोनों ही आत्मा को बंधन में डालते हैं, संसार में घुमाते हैं, अत: दोनों ही त्याज्य हैं।

इस बारे में डॉ. भारिल्ल पहली ही कहानी में लिखते हैं -

''पुण्य और पाप दोनों ही बन्धन के कारण हैं। पाप यदि लोहे की बेड़ी है तो पुण्य सोने की - बेड़ियाँ दोनों ही हैं, बेड़ियाँ बन्धन ही हैं।[२]''

कहानीकार ने अनेक क्रान्तिकारी विवेचन दर्शन के परिप्रेक्ष्य में किये हैं। कहानीकार के अनुसार ईश्वर जगत का कर्ता-धर्ता नहीं है, वह किसी

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-११
२. वही, पृष्ठ-१३

को भी बनाता नहीं है और न ही नाश करता है। इस सृष्टि का प्रादुर्भाव भी अकृत्रिम है, इसकी रचना किसी ने भी नहीं की है और न ही इसका विनाश कोई कर सकता है, इसकी उत्पत्ति व विनाश अपने आप होते हैं।'' कहानीकार लिखते हैं -

''भगवान जगत् के ज्ञाता-दृष्टा हैं, कर्ता-धर्ता नहीं।[१]''

इसीप्रकार से भगवान कौन हैं ? इस बारे में वे लिखते हैं -

''जो जगत् को साक्षीभाव से अप्रभावित रहकर देख सके, जान सके, वस्तुतः वही भगवान है।[२]''

कहानीकार की कहानी 'गाँठ खोल देखी नहीं' भी गूढ़ दार्शनिकता को लेकर लिखी गई है। इसमें अचेतन लाल (हीरे) के माध्यम से चेतन लाल (आत्मा) की अभिव्यक्ति हुई है। कहानी में जिसप्रकार सेठ जवाहर हीरे की जगह भ्रम से काँच खरीद लेता है और उस काँच के टुकड़े को लाल (हीरा) मानता है; उसीप्रकार से इस जगत के लोग भी शरीरादि बाह्य पदार्थों को ही अपना मानते हैं, धन सम्पदा, हीरे-मोतियों इत्यादि को ही लाल मानते हैं; परन्तु वे स्वयं चेतन तत्त्व आत्मा हैं, उसको भूल बैठे हैं। सेठ के माध्यम से प्रस्तुत कहानी में कहानीकार लिखते हैं -

''आज तक सबने अचेतन लालों को ही परखा है, चेतन लालों को नहीं परखा। मैंने तो चेतन लालों को ही परखा था, उसी की कीमत बताई थी।[३]''

तथा -

''कमी लालों की नहीं, उन्हें पहचानने वालों की है, संभालने वालों की है। दूसरों की बात जाने दीजिए, हम स्वयं लाल हैं, पर अपने को पहिचान नहीं पा रहे हैं।[४]''

कहानीकार ने स्पष्ट किया है कि ज्ञान हमारा स्वभाव है और ज्ञान ही हमारा सर्वस्व है, ज्ञान ही हमारा धन है, हम अपने ज्ञानरूपी धन को पहचाने बिना कंगाल हो रहे हैं -

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-४५
२. वही, पृष्ठ-४५
३. वही, पृष्ठ-६३
४. वही, पृष्ठ-६५

"तथा हम स्वयं ज्ञान के घनपिण्ड एवं आनन्द के कन्द हैं, पर अपने को जाने-पहिचाने बिना कंगाल हो रहे हैं। यदि अतीन्द्रिय ज्ञान और आनन्द की कंगाली दूर करना है तो अपने आपको जानना होगा, पहिचानना होगा, मिथ्यात्व की गाँठ खोलनी होगी।[१]"

कहानीकार 'गाँठ खोल देखी नहीं' कहानी में लिखते हैं -

"बुद्धि भी भवितव्य का अनुसरण करती है। जब खोटा समय आता है तो बड़े-बड़े बुद्धिमानों की बुद्धि पर भी पत्थर पड़ जाते हैं"

तथा -

"जबतक स्वयं परखने की दृष्टि न हो तो उधार की बुद्धि से कुछ लाभ नहीं होता।[२]"

इसीप्रकार से कहानीकार सत्य के बारे में लिखते हैं -

"स्वयं से उद्घाटित सत्य जितना लाभदायक होता है, उतना दूसरों के द्वारा नहीं।[३]"

कहानीकार का विचार है कि इच्छाएँ असीम हैं, उनको पूर्ण नहीं किया जा सकता है। यद्यपि हम कितनी भी इच्छाएँ, अभिलाषाएँ व चाह रखें; परन्तु उनकी पूर्ति तो तभी होगी जब हमारे सौभाग्य का उदय होगा और वस्तुतः तो आज तक किसी की भी इच्छाओं की सम्पूर्ति नहीं हुई है -

"आपके चाहने या न चाहने से क्या होता है ? सौभाग्य का उदय हो तो लाभ मिलता ही है।[४]"

तथा -

"चाह आज तक किसी की पूरी नहीं हुई है।[५]"

कहानीकार का मानस है कि वस्तुतः ज्ञान का स्रोत हमारा आत्मा स्वयं ही है, वही सर्व समस्याओं का समाधानकारक है और वही हमारा वास्तविक गुरु है। वे **'जागृत विवेक'** कहानी में लिखते हैं -

"तुम्हारा आत्मा ही तुम्हारा वास्तविक गुरु है।[६]"

---

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-६५ २. वही, पृष्ठ-६३ ३. वही, पृष्ठ-६३
४. वही, पृष्ठ-६३ ५. वही, पृष्ठ-३० ३. वही, पृष्ठ-२३

डॉ. भारिल्ल की कहानियाँ दार्शनिक पृष्ठभूमि के ठोस धरातल पर खड़ी हैं। दार्शनिक तत्त्वों तथा दर्शन के बारे में उनकी सशक्त अभिव्यक्ति हुई है, कहानीकार ने भगवान बनने का उपाय भी दिखलाया है। जहाँ अन्य लोग यह कहते हैं कि भगवान की अटूट भक्ति करने से हम भगवान बन जायेंगे या फिर शरीर को अनेक प्रकार के कष्ट देकर भगवान बन जायेंगे या फिर भगवान की कृपा होने से हम भगवान बन जायेंगे; इन सब से पृथक् दार्शनिक चिन्तन प्रस्तुत करते हुए ये 'आप कुछ भी कहो' कहानी के माध्यम से कहते हैं –

"भगवान बनने का उपाय भी जगत से अलिप्त रहकर साक्षीभाव से ज्ञाता-दृष्टा बने रहना ही है।"

इसीप्रकार से कहानीकार क्रमनियमित परिणमन के सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए कहानी में लिखते हैं –

"जगत् के क्रमनियमित परिणमन को ज्ञाता-दृष्टा भाव से स्वीकार कर लेना ही सम्यग्ज्ञान का कार्य है, उसमें हर्ष-विषाद उचित नहीं, आवश्यक भी नहीं।"

इसप्रकार निष्कर्ष के तौर पर कह सकते हैं कि डॉ. भारिल्ल की कहानियों में दार्शनिकता की अभिव्यक्ति गूढ़ और मुखर दोनों ही रूपों में दृष्टिगोचर होती है।

३. मनोवैज्ञानिकता –

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में मनोवैज्ञानिकता का स्वर भी दिखाई देता है, कई जगह इनकी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि संलक्षित होती है, वस्तुतः डॉ. भारिल्ल मनोविज्ञान के पारखी हैं; अतः इनकी कहानियों में मनोवैज्ञानिकता का समावेश दिखाई देता है। 'तिरिया चरित्तर' कहानी पूर्णरूपेण मनोवैज्ञानिक कहानी है, जिसमें विभिन्न मनोभावों की सुन्दर विवेचना संदर्शित होती है। उक्त कहानी में प्रशंसा के बारे में डॉ. भारिल्ल लिखते हैं –

"प्रशंसा मानव-स्वभाव की एक ऐसी कमजोरी है कि जिससे बड़े-बड़े ज्ञानी भी नहीं बच पाते हैं। निन्दा की आँच भी जिसे पिघला नहीं पाती, प्रशंसा की ठंडक उसे क्षार-क्षार कर देती है।[१]"

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-६८

कहानीकार पुरुषों के स्वभाव के भी सूक्ष्म मर्मज्ञ हैं। 'तिरिया चरित्तर' कहानी में पण्डितजी और पनिहारिन के घर में अकेले होने और अचानक उस पनिहारिन के पति के आने और दरवाजा खटखटाने के प्रसंग में वे पनिहारिन के माध्यम से कहते हैं –

''क्या किसी पुरुष के लिए किवाड़ बन्द करके किसी परपुरुष के साथ उसकी पत्नी की उपस्थिति मात्र उत्तेजित करने के लिए पर्याप्त नहीं है।[१]''

कहानीकार 'अक्षम्य अपराध' कहानी में अपमानित मानी व्यक्ति की प्रवृत्ति का चित्रण करते हुए लिखते हैं –

''अपमानित मानी क्रोधित भुजंग एवं क्षुधातुर मृगराज से भी अधिक दु:साहसी हो जाता है। आज संघ खतरे में है – कहते-कहते आचार्यश्री और भी अधिक गम्भीर हो गये।[२]''

वस्तुत: डॉ. भारिल्ल की कहानियों में मनोवैज्ञानिकता की सूक्ष्मदर्शी दृष्टि दिखाई देती है। कहानीकार साधु-महात्माओं के स्वभाव के पारखी भी हैं, उन्होंने 'अक्षम्य अपराध' कहानी में लिखा है –

''सहज सरलता के धनी महात्माओं का कुछ भी तो गुप्त नहीं होता।''

इसीप्रकार से चेहरे को पढ़ने की कला के बारे में वे लिखते हैं –

''शब्दों की भाषा से मौन की भाषा किसी भी रूप में कमजोर नहीं होती, बस उसे समझने वाले चाहिए।''

इसीप्रकार से कहानीकार ने अपनी कहानियों में नारियों के स्वभाव व उनके मनोविज्ञान को भी अभिव्यक्त किया है। वे 'गाँठ खोल देखी नहीं' कहानी में लिखते हैं –

''बिना डींग हाँके दुर्भाग्य से लड़ने की जितनी क्षमता नारियों में सहज देखी जा सकती है, पुरुषों में उसके दर्शन असम्भव नहीं तो दुर्लभ तो हैं ही।''

---

१. आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-६७
२. वही, पृष्ठ-१७

तथा -

''दु:ख-सुख सहने की जितनी सामर्थ्य नारियों में होती है, उतनी पुरुषों में कहाँ ?''

इसीप्रकार से पुरुषों के मनोविज्ञान का चित्रण करते हुए 'तिरिया चरित्तर' कहानी में वे लिखते हैं -

''देखी आपने पुरुषों की पशुता! स्वयं चाहे हजारों औरतों से सब प्रकार के सम्बन्ध रखें, परन्तु स्त्री को किसी से बात करते देख लिया तो हो गये पागल। यह नहीं सोचते कि नारियाँ भी तो पुरुषों के समान ही हाड़-मांस वाली प्राणी हैं।''

तथा -

''पण्डितों के प्रवचनों में वह सामर्थ्य कहाँ, जो नारियों के आँसुओं में है। वे अपनी बात को आँसुओं से भीगी भाषा में रखने में इतनी चतुर होती हैं कि बड़े-बड़े धर्मात्मा भी अपने को पापी समझने लगें।''

इसप्रकार निष्कर्ष रूप से कह सकते हैं कि डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानियों में मनोवैज्ञानिकता का निदर्शन कराया है और कहानियों में मनोवैज्ञानिकता का समावेश होने से, ये कहानियाँ अत्यन्त उच्चकोटि की बन पड़ी हैं।

४. बुद्धि और विवेक -

डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानियों में बुद्धि और विवेक को भी प्रमुख विषय बनाया है, कुछ कहानियों के तो शीर्षक भी इसी पर आधारित हैं। जैसे इनकी एक कहानी का नाम 'जाग्रत विवेक' है, तथा एक अन्य कहानी का नाम 'जरा-सा अविवेक' है। 'जरा-सा अविवेक' कहानी में कहानीकार ने प्रतिपादित किया है कि जरा से अविवेक से कितने अनर्थ हो जाते हैं। दो शरीर और एक आत्मा की उक्ति को चरितार्थ करनेवाले सेठ धनपतराय व पण्डित सुमतिचन्द जैसे मित्रों के संबंधों में गहरी खाइयाँ हो जाती हैं, नाजुक दिल टूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं, मनों की शान्ति भंग हो जाती है एवं जीवन-यापन करना भी दूभर हो जाता है।

'जरा-सा अविवेक' कहानी में कहानीकार ने सेठ की पत्नी के माध्यम से कहा है -

'' हे भगवान! मेरे जरा-से अविवेक ने क्या अनर्थ कर डाला ? मैंने एक ज्ञानी की विराधना कर अनन्त ज्ञानियों की विराधना का महापाप तो किया ही, साथ में अपने पति की आन्तरिक शान्ति को भंग कर उनका जीना भी दूभर कर दिया।''

इसीप्रकार से 'जाग्रत विवेक' कहानी में कहानीकार ने स्पष्ट किया है कि जबतक मनुष्य में स्वयं की बुद्धि और विवेक नहीं होगा, दूसरों के द्वारा कितना कुछ भी सीख-समझ ले, ज्यादा कार्यकारी नहीं होता है। यद्यपि गुरु का उपदेश भी मिलता है, पर वह सर्वत्र उपलब्ध नहीं होने से स्व-विवेक ही सर्व समाधान कारक है। वे प्रस्तुत कहानी में लिखते हैं -

''समागत समस्याओं का समुचित समाधान तो स्व-विवेक से ही सम्भव है; क्योंकि गुरु की उपलब्धि तो सदा सर्वत्र सम्भव नहीं है।''

कहानीकार डॉ. भारिल्ल का मन्तव्य है कि यदि हमें अनुशासन और प्रशासन को व्यवस्थित रूप से कायम रखना है तो उसमें भावुकता न होकर बुद्धि पर आधारित निर्णय होना चाहिए। वे 'अक्षम्य अपराध' कहानी में यति श्रुतसागर के माध्यम से कहते हैं -

''अपराधी को दण्ड देते समय न्यायाधीश को उसके गुणों और उपयोगिता पर ध्यान नहीं देना चाहिए।''

कहानीकार का विचार है कि यदि हमें किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त करनी है तो उसमें कर्मठता के साथ विवेक का होना अनिवार्य है -

''सफलता विवेक के धनी कर्मठ बुद्धिमानों के चरण चूमती है।''

कहानीकार ने लिखा है कि यद्यपि विवेक बहुत कुछ है, परन्तु वह विनय और मर्यादा की परिधि को तोड़ने वाला नहीं होना चाहिए तथा विवेक के नाम पर कोई अनुचित कार्य नहीं करना चाहिए -

''यद्यपि विवेक का स्थान सर्वोपरि है, किन्तु वह विनय और मर्यादा को भंग करने वाला नहीं होना चाहिए। विवेक के नाम पर कुछ भी कर

डालना तो महापाप है; क्योंकि निरंकुश विवेक पूर्वजों से प्राप्त श्रुतपरम्परा के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।''

कहानीकार का मानना है कि किसी भी व्यक्ति या वस्तु की सत्यता या असत्यता का आधार हम अपने हृदय के आधार पर नहीं कर सकते हैं, उसके लिए तो बुद्धि और विवेक आवश्यक है। वे 'उच्छिष्ट भोजी' कहानी में भरत चक्रवर्ती के माध्यम से कहते हैं -

''सत्यासत्य का निर्णय हृदय से नहीं, बुद्धि से-विवेक से होता है।''

कहानीकार 'गाँठ खोल देखी नहीं' कहानी में कहते हैं कि हमें किसी भी वस्तु की परख करने के लिए स्वयं की बुद्धि अत्यन्त आवश्यक है -

''जबतक स्वयं परखने की दृष्टि न हो तो उधार की बुद्धि से कुछ लाभ नहीं होता।''

इसीतरह से 'अभागा भरत' कहानी में कहानीकार लिखते हैं -

''कर्त्तृव्य की ठोकर बुद्धि ही बर्दाश्त कर सकती है, हृदय नहीं।''

कहानीकार ने लिखा है कि विद्या प्राप्त करने के लिए विनय के साथ विवेक व प्रतिभा (बुद्धि) भी आवश्यक है। वे 'जागृत विवेक' कहानी में लिखते हैं -

''विनय के बिना तो विद्या प्राप्त होती ही नहीं है, पर विवेक और प्रतिभा भी अनिवार्य हैं, इनके बिना भी विद्यार्जन असम्भव है।''

इसप्रकार डॉ. भारिल्ल की कहानियों में बुद्धि और विवेक का स्वर भी प्रमुख रूप से मुखरित हुआ है। कहानीकार ने स्वीकार किया है कि बुद्धि होनहार का अनुसरण करती है। वे 'गाँठ खोल देखी नहीं' कहानी में लिखते हैं -

''बुद्धि भी भवितव्य का अनुसरण करती है। जब खोटा समय आता है तो बड़े-बड़े बुद्धिमानों की बुद्धि पर भी पत्थर पड़ जाते हैं।''

इसतरह से निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि डॉ. भारिल्ल की कहानियों में बुद्धि व विवेक भी एक विषय के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

५. पौराणिकता -

डॉ. भारिल्ल की कुछ कहानियाँ जैन पुराण ग्रन्थों पर आधारित हैं, जिनमें 'आप कुछ भी कहो', 'अक्षम्य अपराध', 'जाग्रत विवेक', 'अभागा भरत' और 'उच्छिष्ट भोजी' कहानियाँ जैन पुराणों पर आधारित हैं।

'आप कुछ भी कहो' कहानी में जैन पुराणों में वर्णित योगीराज आचार्य वादिराज को कोढ़ हो जाने के प्रसंग को कथानक बनाया गया है, जिसमें कि आचार्य वादिराज को कोढ़ हो जाता है। जब वे एक नगर में पहुँचते हैं तो उन्हें देखकर राजा के कुछ मंत्री राजा से कहते हैं कि - दिगम्बर साधु कोढ़ी होते हैं; परन्तु राजश्रेष्ठी इस बात का खंडन करते हैं। अंततः स्वयं राजा उनके दर्शन करने के लिए आते हैं और इधर आचार्य वादिराज के पुण्य-प्रताप से उनकी देह स्वर्णकान्ति जैसी हो जाती है, कोढ़ का विनाश हो जाता है। सब लोग कहते हैं कि यह तो चमत्कार है, पर ऋषि वादिराज कहते हैं कि यह तो सहज स्वतः परिणमन है।

'अक्षम्य अपराध' कहानी भी जैन पुराणों पर आधारित है, जिसमें आचार्य अकम्पन की आज्ञा से अनभिज्ञ उनके शिष्य श्रुतसागर द्वारा आहार ग्रहण करने के पश्चात् राजा के दुष्ट मंत्रियों के साथ वाद-विवाद हो जाता है। मंत्री पराजित हो जाते हैं। यह आचार्य अकम्पन के अनुसार श्रुतसागर ने अक्षम्य अपराध किया था; क्योंकि इस कारण से कुछ समय बाद अन्य सभी ७०० मुनियों पर विपत्ति आने वाली थी।

'जाग्रत विवेक' कहानी भी प्राचीन जैन पुराणों पर आधारित है। जिस समय कि लिखने की परम्परा नहीं थी, अध्ययन और अध्यापन मौखिक ही चलता था; अतः विलुप्त होते द्वादशांग के ज्ञान को सुरक्षित लिपिबद्ध करने के लिए आचार्य धरसेन को पुष्पदंत व भूतबलि नामक दो शिष्यों की प्राप्ति की कथा है।

'अभागा भरत' तथा 'उच्छिष्ट भोजी' कहानियाँ प्रसिद्ध पौराणिक चरित्र भरत चक्रवर्ती को माध्यम बनाकर लिखी गई हैं, जिसमें 'अभागा भरत' कहानी में भरत को एक साथ तीन शुभ समाचार प्राप्त होते हैं -

१. पुत्र रत्न की प्राप्ति, २. चक्ररत्न की प्राप्ति और ३. पिता ऋषभदेव को केवलज्ञान की प्राप्ति।

वे अपने आपको अभागा मानते हैं; क्योंकि उन्हें आद्य तीर्थंकर ऋषभदेव की दिव्यवाणी सुनने के समय युद्धकार्य के लिए, छह खण्डों पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए जाना पड़ता है।

इसीप्रकार 'उच्छिष्ट भोजी' कहानी में भरत चक्रवर्ती के माध्यम से कहा गया है कि हमें जो धन-दौलत प्राप्त हुई है, वह वस्तुत: उच्छिष्ट (झूठी) है; क्योंकि स्वयं हमने तथा अन्य लोगों ने कई बार पहले भी उसका भोग-उपभोग किया है, अत: इस पर गर्व करना अभिमान करना व्यर्थ है।

इसप्रकार से डॉ. भारिल्ल की कहानियों में पौराणिकता दर्शनीय है, इन्होंने पौराणिक कथानकों में भी अपनी कहानियों के लिए विषय ग्रहण किया है।

६. अन्य -

कहानीकार डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानी में अनेक विषयों को समाविष्ट किया है। उपर्युक्त विषयों के अलावा राजनीति, समाज, धर्म, नैतिकता इत्यादि विषयों का संयोजन भी डॉ. भारिल्ल की कहानियों में दिखाई देता है। 'अभागा भरत' कहानी में कहानीकार अपनी सूक्ष्मदर्शी दृष्टि से देखकर राजनीति के बारे में लिखते हैं -

''राजनीति अपना रस सब जगह से ग्रहण करती है। देश की अखंडता के लिए मात्र जमीन ही जीतना जरूरी नहीं होता, जनता का दिल भी जीतना होता है।''

इसीप्रकार 'उच्छिष्ट भोजी' कहानी में वे माँ की ममता के बारे में लिखते हैं -

''दिग्विजय की सफलता के समाचार समय-समय पर राजमाता को प्राप्त हो रहे थे, तथापि माँ का हृदय समाचारों से कब तृप्त हुआ है ? उसे तो पुत्र सम्मिलन से ही सन्तोष होता है।''

इसीतरह कहानीकार चित्त की विशेषता बताते हुए लिखते हैं-

'चित्त कोई जमीन नहीं, जिसे बल से, वैभव से, पुण्य-पाप से जीत लिया जाये।'

इसीतरह से सम्प्रदाय परिवर्तन को भी कहानीकार ने कहानी का विषय बनाया है। चूँकि सम्प्रदाय में रहकर सम्प्रदाय के साथियों को सत्य समझाना सरल होने पर भी उनमें क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना सम्भव नहीं है। पक्ष का व्यामोह भी कितना जटिल होता है। यह मार्ग सही नहीं है- यह स्वीकार करके भी इसे छोड़ने की कल्पना भी लोगों को आंदोलित कर देती है। यथा - ''बाड़े का बन्धन असह्य प्रतीत होने पर भी बाड़े की सीमा का उल्लंघन करने की कल्पना भी सामान्यजनों को कँपा देती है।''

इसप्रकार कई विषयों का सन्निवेश डॉ. भारिल्ल की कहानियों में प्रतिभासित होता है।

निष्कर्ष-

डॉ. भारिल्ल की कहानियों में विषय-वैविध्य होना अपने आप में एक विशेषता है;[१] क्योंकि उन्होंने अनेक बिन्दुओं को अपनी कहानियों में उठाया है। अध्यात्म, दर्शन, मनोविज्ञान, पौराणिक आख्यान, संवेदना, नारी चेतना के स्वर, नैतिक एवं मानवीय उदात्त मूल्य-इत्यादि विभिन्न पहलुओं को डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानियों का विषय बनाकर हिन्दी कथासाहित्य को एक बहुमूल्य निधि दी है, एक नई दृष्टि दी है।[१] उनके साथ ही मानव समाज के सामने भी कई उच्चादर्श डॉ. भारिल्ल ने अपनी कहानियों में प्रस्तुत किये हैं।

(ख) डॉ. भारिल्ल के उपन्यास का विषय वैशिष्ट्य -

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल ने अपनी कहानियों की तरह अपने उपन्यास 'सत्य की खोज' में भी एक मूल विषय को उजागर किया है। उपन्यासकार ने एक संक्षिप्त कथानक जो कि मार्मिक, रोचक, संवेदनशील,

१. जैन संदेश (साप्ताहिक) मथुरा, २ फरवरी, १९७८

१. वीर-वाणी (पाक्षिक) जयपुर, १८ जनवरी, १९७८

कौतूहलपूर्ण है, इसके माध्यम से अपने कथ्य विषय को अभिव्यक्ति दी है।इन्होंने अपने कथानक का मूल विषय धर्म के नाम पर समाज में व्याप्त अंधविश्वासों और आडम्बरों को बनाया है। साथ ही फिजूलखर्ची, धर्म का स्वरूप, भगवान का स्वरूप, भक्त का स्वरूप, भक्ति का स्वरूप तथा सत्य और श्रद्धा जैसे मनोभावों को भी उपन्यासकार ने विभिन्न विषयों के रूप में समाहित किया है। सर्वप्रथम हम उपन्यास के कथानक पर संक्षिप्त दृष्टिपात करते हैं –

कथानक –

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास 'सत्य की खोज' का कथानक संक्षिप्त, सरल, रोचक, कौतूहलोद्दीपक, संगठित एवं अन्विति से युक्त, अंत:संघर्ष एवं द्वन्द्व से परिपूर्ण तथा यथार्थ के धरातल पर प्रतिष्ठित है। कथानक इस प्रकार का है कि उपन्यास का नायक विवेक जो कि अपने धनाढ्य पिता की इकलौती संतान है और वह सदाचारी नैतिक एवं सादगीपूर्ण जीवन में विश्वास रखने वाला तथा धर्म के नाम पर प्रचलित अंधविश्वासों का विरोधी और सत्य एवं तथ्य का प्रबल पक्षधर है। वह अनेक धनाढ्य परिवारों की कन्याओं एवं दहेज को ठुकरा कर एक मध्यम वर्गीय परिवार की सुन्दर कन्या 'रूपमती' के साथ अत्यंत सादगीपूर्ण तरीके से विवाह करता है। पत्नी रूपमती धर्म के नाम पर प्रचलित अन्धविश्वासों पर ही श्रद्धा रखती है; परन्तु विवेक सत्य के मार्ग से उसे सत्यपथ पर पहुँचा देता है, साथ ही सामाजिक संघर्ष का सजीव चित्रण भी उपन्यास में वर्णित है।

उपन्यास का विषय वैशिष्ट्य –

इसके अंतर्गत जब हम विचार करते हैं तो पाते हैं कि डॉ. भारिल्ल ने अपने उपन्यास का मूल विषय धर्म के नाम पर समाज में व्याप्त अंधविश्वासों और रूढ़ियों को बनाया है। उपन्यासकार का मन्तव्य है कि धर्म के नाम पर प्रचलित ढोंग का मुख्य कारण अंधश्रद्धा है। अंधविश्वास प्रचलित कर लोगों को ठगने वाले जानते हैं कि यदि हमें इस अंधविश्वास या ढोंग को

प्रचारित व प्रसारित करना है तो सर्वप्रथम लोगों की श्रद्धा अपनी ओर आकर्षित करनी होगी –

''चतुर लुटेरा यह अच्छी तरह जानता है कि श्रद्धा को लूटे बिना किसी को पूरा नहीं लूटा जा सकता। श्रद्धा लूटने के लिए बहुत कुछ करना होता है। अज्ञानी होते हुए भी ज्ञान का, अत्यागी होते हुए भी त्याग का, सब कुछ रखकर भी कुछ न रखने का, सब कुछ करते हुए भी कुछ न करने का प्रदर्शन करना पड़ता है; क्योंकि इनके बिना किसी की भी श्रद्धा को लूटना संभव नहीं है। धर्म के नाम पर ढोंग-प्रचलन का मूल केन्द्र-बिन्दु यही है।''[१]

उपन्यासकार का मानना है कि अंधविश्वासों के पनपने का मूल कारण अंधश्रद्धा है और अंधश्रद्धालु व्यक्ति को तर्क व सत्य से युक्त बात समझाना बहुत कठिन होता है, जिस कारण वह अंधविश्वासी एवं रूढ़िवादी ही बना रहता है। उपन्यास 'सत्य की खोज' में वे लिखते हैं –

''अंधश्रद्धा, तर्क स्वीकार नहीं करती। यही कारण है कि अंधश्रद्धालु को सही बात समझा पाना असंभव नहीं तो कष्टसाध्य अवश्य है। यदि वह तर्कसंगत बात को स्वीकार करने लगे तो फिर अंधश्रद्धालु ही क्यों रहे ?''[२]

तथा –

''अंधश्रद्धालु को हर तर्क, कुतर्क दिखाई देता है। इष्ट की आशा और अनिष्ट की आशंका उसे सदा भयाक्रान्त रखती है। भयाक्रान्त व्यक्ति की विचारशक्ति क्षीण हो जाती है। उसकी इसी कमजोरी का लाभ कुछ धूर्त लोग सदा से ही उठाते आये हैं और उठाते रहेंगे।''

उपन्यासकार ने लिखा है कि तथाकथित साधु संन्यासी अपना प्रभाव जमाने के लिए तंत्र-मंत्र इत्यादि का सहारा लेते हैं और लोगों को अपने चंगुल में फंसाकर अपना कार्य सिद्ध करते हैं तथा ऐसे मिथ्या साधुओं व गुरुओं के जाल में फंसे अंधश्रद्धालु और अंधविश्वासी लोगों को उबारना बहुत मुश्किल होता है;[३] क्योंकि ''तथाकथित गुरुओं के गुरुडम का

१. सत्य की खोज, पृष्ठ-३४ २. वही, पृष्ठ-३४

१. वीर (पाक्षिक) मेरठ, १ नवम्बर, १९७१

पर्दाफाश करना उतना कठिन नहीं, जितना उनके चंगुल में फँसे हुए अंधश्रद्धालु बन्धुओं को उबारना।''

और चूँकि दूर के शत्रु को मारना जितना आसान है, उतना गृह प्रविष्ट को नहीं, जो अपने में अनुप्रविष्ट हो, उसका तो कहना ही क्या ? विवेक के सामने आज तथाकथित गुरुओं का पर्दाफाश करने की समस्या न थी, ऐसे गुरुओं का पर्दाफाश तो वह कई बार कर चुका था, किन्तु आज तो समस्या थी उनके चंगुल से अपनी पत्नी को उबारने की।

इसीतरह से उपन्यास में धर्म के नाम पर धंधा करनेवाले ढोंगी साधुओं का यथार्थ चित्रण भी किया है, वे नायक विवेक के माध्यम से लिखते हैं -

''मंत्र-तंत्रवाद साधुता की शोभा नहीं। मोटर-गाड़ियों से साधुओं का क्या कारण? और इस बात में क्या दम है कि वे तो कुछ लेते नहीं, चढ़ावा तो उनके शिष्यगण संभालते हैं, उसमें उनका तो कुछ है नहीं, जब उनका नहीं तो उनके साथ क्यों ? उसकी साज संभार क्यों?''

तथा -

''भीड़ से घिरा रहना और मेला लगा रहना कोई साधुता की निशानी नहीं है। लाइन लगने और मिलने का समय न मिलने का तो सवाल ही नहीं है। साधु का किसी से एकान्त में मिलने का क्या प्रयोजन है ? वे सबका भला चाहते हैं तो उन्हें सबको ही सुख का मार्ग बताना चाहिए। उपदेश कोई दवा तो है नहीं, जो व्यक्तिगत दी जाये।''

तथा -

''पर तुम जरा सोचो तो, योगियों को भीड़ से क्या प्रयोजन ? भीड़ तो भयाक्रान्त भोगी चाहते है, निर्भय योगी नहीं।''

उपन्यासकार के अनुसार यदि हमें अंधविश्वासों और रूढ़ियों से मुक्त होना है, सत्य स्वरूप की उपलब्धि करनी है तो हमें अपनी अंधश्रद्धा को तोड़ना होगा, समूल नाश करना होगा; क्योंकि चमत्कारों के मिथ्या प्रदर्शन से कुछ लोग जन सामान्य की श्रद्धा को अपनी ओर खींच लेते हैं और जिसके प्रति हमारी श्रद्धा हो जाती है, हम उसे सर्वस्व समर्पण कर देते हैं, उपन्यासकार कहते हैं -

''जिसके प्रति श्रद्धा होती है, उसे व्यक्ति अपना सर्वस्व समर्पण करने के लिए तैयार हो जाता है।''

तथा -

''श्रद्धा का लुटेरा ही सबसे बड़ा लुटेरा है। धन-जन-तन का लुट जाना कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता; पर मन का लुट जाना, श्रद्धा का लुट जाना, सब कुछ लुट जाना है।''

तथा -

''चोर और डाकू सिर्फ धन लूटते हैं, उससे भी बड़े अपराधी जन लूटते हैं, तन लूटते हैं; पर श्रद्धा के लुटेरे धन-जन-तन तो लूटते ही हैं, साथ में जीवन भी लूट ले जाते हैं। अत: यह सत्य ही है कि श्रद्धा का लुटेरा सबसे बड़ा लुटेरा है।''

इसीप्रकार से उपन्यास के नायक विवेक के माध्यम से उपन्यासकार ने संदेश दिया है कि फिजूलखर्ची न होकर के हमें सारे कार्य सदाचार व सादगीपूर्वक सम्पन्न करने चाहिए। वे विवेक का चरित्रोद्घाटन करते हुए लिखते हैं -

''पर विवेककुमार को यह सब पसंद न था। वह नहीं चाहता था कि उसकी शादी के नाम पर व्यर्थ का आडम्बर और बर्बादी की जाए। वह यह भी नहीं चाहता था कि कन्या के पिता पर व्यर्थ ही बलात् आर्थिक बोझ डाला जाए।''

उपन्यासकार का विचार है कि वस्तुत: जो अंधविश्वासों से परिपूर्ण हो, वह धर्म नहीं हो सकता, वह तो धर्म के नाम पर कलंक है तथा धर्म तो वह है जो वस्तुस्वरूप के अनुरूप हो, सत्य व तथ्य तथा बुद्धि व विवेक की कसौटी पर खरा उतरे। वे उपन्यास के नायक विवेक के माध्यम से कहते हैं -

''धर्म परम्परा नहीं, स्वपरीक्षित साधना है। धर्म का कुल से क्या सम्बन्ध ? धर्म का सम्बन्ध तो निज विवेक से है।''

उपन्यासकार ने कुलपरम्परा से प्राप्त धर्म को वस्तुत: धर्म नहीं माना; क्योंकि वह अंधविश्वास व रूढ़ियों से समन्वित भी हो सकता है तथा विभिन्न कुलों में विभिन्न प्रकार के धर्मों की उपासना की जाती है - उनमें

कोई राग को धर्म मानता है, कोई वीतरागता को, कोई भोग को, धर्म मानता है तो कोई त्याग को। यदि कुल से प्राप्त परम्परा को ही धर्म माना जाए तो फिर दोनों को धर्म मानना पड़ेगा। जरा विचारिये कि यदि हम उस कुल में पैदा हुए होते, जिसमें मद्य-मांसादि का सेवन किया जाता है, तो क्या फिर उनका सेवन भी धर्म होता ? अत: -

''धर्म तो व्यक्तिगत चीज है, व्यक्तिगत विश्वास है, जो विवेकपूर्वक स्वीकार किया जाता है।''

उपन्यासकार कहते हैं कि अंधविश्वासों या कपोल-कल्पित चमत्कारों के कारण भगवान की प्रार्थना, पूजा, स्तुति करना भक्ति नहीं है -

''कपोलकल्पित चमत्कारों को बढ़ा-चढ़ाकर चर्चा करना, भगवान का बहुमान नहीं, भक्ति नहीं, स्तुति नहीं; वरन् उनमें विद्यमान वीतरागता, सर्वज्ञता, अनन्तसुख अनन्तवीर्य-इत्यादि गुणों का चिन्तवन, महिमा, बहुमान ही वास्तविक भक्ति है।''

तथा -

''भक्ति तो गुणों के प्रति अनुराग को कहते हैं।''

इसीप्रकार से उपन्यासकार ने प्रतिपादित किया है कि भगवान वह नहीं है जो छल-प्रपंच या चमत्कारों, आडम्बरों से परिपूर्ण है, अपितु -

''भगवान तो वीतरागी होते हैं। वे प्रशंसक से प्रसन्न और निन्दक से नाराज नहीं होते। भगवान तो शत्रु-मित्र दोनों में समभाव रखने वाले होते हैं; क्योंकि प्रशंसा से प्रसन्न और निन्दा से नाराज होना तो हमारे-तुम्हारे जैसे सामान्य लोगों के कार्य हैं।''

डॉ. भारिल्ल ने साधुओं, तपस्वियों का सच्चा स्वरूप भी बताया है, उनके अनुसार तंत्र-मंत्र इत्यादि द्वारा चमत्कार उत्पन्न करनेवाले या अन्धविश्वासों को बढ़ावा देने वाले तथाकथित साधु सच्चे तपस्वी नहीं हैं, अपितु ठगने वाले हैं। वे उपन्यास के नायक विवेक के माध्यम से कहते हैं -

''तपस्वी (साधु) तो वही प्रशंसा के योग्य है, जो विषयों की आशा से रहित हो, जिसके पास किसी प्रकार का आरम्भ परिग्रह न हो और जो

सदा ज्ञान, ध्यान तथा तप में लीन रहता हो; क्योंकि साधुओं का इन बाह्य आडम्बरों से क्या काम ?''

भारिल्लजी का मन्तव्य है कि पुरुषों की अपेक्षा सहज श्रद्धालु होने के कारण नारी अधिक अंधविश्वासी हो जाती है, जबतक नारियाँ शिक्षित नहीं होंगी, जागरूक नहीं होंगी, वे इसीतरह से अंधविश्वास और ढोंगी महात्माओं का शिकार बनती रहेंगी। वे विवेक के माध्यम से कहते हैं-

''जबतक सहज श्रद्धालु नारी शिक्षित नहीं होगी, उसे ढोंगी साधुओं और धूर्त महात्माओं से बचाना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।''

उपन्यासकार का मानना है कि इन अंधविश्वासों, कुरीतियों और पाखण्डों पर नियंत्रण करना मुश्किल है; अतः यह अवश्य ध्यान रखें कि भले ही हम उक्त चीजों से जगत को सावधान न कर पाएँ पर स्वयं तो सावधान रहें ही, क्योंकि -

''जगत में कोई खोटा सिक्का चलाए तो उसको रोकना अपने बस की बात नहीं है, पर अपनी तिजोरी में खोटा सिक्का न आ जाए - इसका ध्यान तो रखना ही पड़ता है; अतः तुम अपनी चिन्ता करो, जगत की नहीं।''

तथा -

''सुखी होने का रास्ता सत्य पाना है, सत्य समझना है, किसी का भंडाफोड़ करना नहीं, किसी की पोल खोलना नहीं। यदि इस एक ढोंगी साधु की पोल खोल भी दी तो क्या हो जाने वाला है, न जाने लोक में ऐसे कितने लोग हैं ? तुम कहाँ-कहाँ पहुँचोगी, किस-किस को बचाओगी ?''

उपन्यासकार ने स्वीकार किया है कि यद्यपि बहुत से साधु ढोंगी तथा जंतर-मंतर और चमत्कार करनेवाले, पाखण्डी तथा अंधविश्वास को बढ़ावा देने वाले हैं; परन्तु फिर भी साधुओं पर प्रतिबंध नहीं लगवा सकते; क्योंकि फिर नकली साधुओं के साथ ही सच्चे साधु-संन्यासियों पर भी प्रतिबंध लग जायेगा और ऐसा होना भारतीय श्रमण संस्कृति के लिए घातक होगा। वे विवेक के माध्यम से कहते हैं -

''जिसप्रकार एक सत्य दर्शन की सुरक्षा आवश्यक है, भले ही उसके कारण अनेक गलत भी चलते रहें; उसीप्रकार एक सच्चे साधु के अप्रतिबंधित

विहार के लिए अनेक तथाकथित साधुओं पर भी प्रतिबंध लगाना सम्भव नहीं है।''

डॉ. भारिल्ल का मानना है कि अंधविश्वास इसलिए तेजी से पनप रहे हैं, क्योंकि कोई सत्य की खोज ही नहीं करना चाहता है, अतः -

''सत्य नहीं, सत्य की खोज खो गई है। सत्य को नहीं, सत्य की खोज को खोजना है।''

इसीप्रकार से उपन्यासकार ने समाज के बारे में भी अपना दृष्टिकोण अभिव्यक्त किया है। वे उपन्यास के नायक विवेक के माध्यम से लिखते हैं -

''मेरे द्वारा न सत्य की कीमत पर संगठन होगा, न संगठन की कीमत पर सत्य ही छोड़ा जायेगा। धर्म के लिए सत्य जरूरी है और समाज के लिए संगठन।''

इसप्रकार से डॉ. भारिल्ल ने अपने उपन्यास में धर्म-धर्मान्धता व समाज को एक विषय के रूप में प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष -

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल ने उपर्युक्त प्रकार से अपने उपन्यास में विभिन्न विषयों के होने पर भी अंधविश्वास और पाखण्ड तथा समाज के सजीव चित्र को एक विषय के रूप में प्रस्तुत कर समाज को एक नई चेतना प्रदान की है। इनके उपन्यास 'सत्य की खोज' में धर्मान्धता पर कठोर प्रहार के साथ ही 'धर्म क्या है ?' इस बारे में भी पर्याप्त विवेचन दिखाई देता है, साथ ही जैनदर्शन के गूढ़ व मार्मिक सिद्धान्तों की सहज अभिव्यक्ति भी समीचीन रूप से दृष्टिगोचर होती है। समाज में फैली विकृत रूढ़ियों, मिथ्या तंत्र-मंत्र तथा पाखण्डी साधु-महात्माओं का यथार्थ चित्रण भी डॉ. भारिल्ल के उपन्यास में दिखाई देता है, साथ ही भगवान और भक्त तथा भक्ति का सम्यक् स्वरूप भी सुन्दर ढंग से कथानक के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है।

निष्कर्ष रूप में डॉ. भारिल्ल का उपन्यास साहित्य निस्सन्देह धर्म व समाज में व्याप्त रूढ़ियों के सशक्त भंजक के रूप में दिखाई देता है, इसका मूल विषय भी इसी पर आधारित है। ❖ ❖ ❖

उपसंहार

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल और उनका कथासाहित्य शीर्षक के अन्तर्गत डॉ. भारिल्ल के कथासाहित्य का समालोचनात्मक एवं समीक्षात्मक परिशीलन करने के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारिल्लजी के कथासाहित्य में निहित कथावस्तु, चरित्रविधान, संवाद-योजना, देशकाल और वातावरण, भाषा-शैली और उद्देश्य - इन सभी तत्त्वों का समावेश सुन्दर रूप से दृष्टिगोचर होता है।

हिन्दी साहित्य के कथासाहित्य में अभिवृद्धि करके डॉ. भारिल्ल ने हिन्दी साहित्य में अनुपम योगदान दिया है-

साहित्य की प्रत्येक विद्या में चरमोत्कर्ष प्राप्त करनेवाले व्यक्तित्व दुर्लभ ही होते हैं; परन्तु डॉ. भारिल्ल लोकप्रिय उपन्यासकार, रोचक कहानीकार, सहृदय कवि, सफल सम्पादक एवं निष्णात निबन्धकार भी हैं।

साहित्य समाज का दर्पण होता है। वह समाज में व्याप्त रूढ़िग्रस्त विचारों को तथा तत्कालीन विचारधाराओं को प्रकाशित करता है और समाज उसमें अपना चेहरा देखकर बोधिलाभ को प्राप्त होता है। डॉ. भारिल्लजी का साहित्य भी समाज को दिशा-निर्देशक रहा है।

यद्यपि डॉ. भारिल्ल का प्रतिपाद्य विषय जैनदर्शन ही रहा है, तथापि आपके साहित्य में तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों एवं भारतीय संस्कृति का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया गया है। इसीतरह नारी चेतना की व्याख्या भी आपने अपने साहित्य के माध्यम से की है।

इनके उपन्यास की कथावस्तु सहज रोचक, कौतूहलपूर्ण, अन्विति से युक्त, सशक्त और मार्मिक है।

इनके उपन्यास का चरित्र-चित्रण या पात्र-योजना तत्त्व भी सुन्दर है। इसका नायक विवेक तथा नायिका रूपमती है, खलनायक के रूप में ढोंगी साधु तथा कुछ अन्य असामाजिक तत्त्वों की योजना होने से उपन्यास का चरित्र-चित्रण भी अत्यंत सशक्त बन पड़ा है।

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास की संवाद योजना भी मार्मिक है। इसमें नाटकीय, चरित्रोद्घाटक, गतिशील, संक्षिप्त और सरल, पात्रानुकूल, उद्देश्यपूर्ण और रोचक संवाद समाविष्ट हैं। इनके संवादों में सजीवता, नाटकीयता, सरलता, भाव प्रवणता तथा सम्प्रेषणीयता द्रष्टव्य है। इनके उपन्यास का देशकाल और वातावरण पात्रानुकूल, परिस्थितियों के अनुरूप, प्रभावोत्पादक और सजीव है। पात्रों की मानसिक दशाओं, अन्तर्द्वन्द्व आदि आंतरिक वातावरण के साथ ही, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक इसतरह बाह्य वातावरण का स्वाभाविक और यथार्थ चित्रण हुआ है। इनके उपन्यास की भाषा सरल, भावानुकूल, पात्रानुकूल, तत्सम, तद्भव, देशज और अरबी-फारसी, अंग्रेजी एवं उर्दू के शब्दों से युक्त है।

न केवल भाषा की दृष्टि से अपितु भाव-गाम्भीर्य, शब्द-वैचित्र्य, उक्ति वैचित्र्य और समाहार शक्ति से और अलंकृत शैली से भी इनका उपन्यास परिपूर्ण है, इनके उपन्यास में मनोविश्लेषणात्मक, वर्णनात्मक, नाटकीय, आत्मविश्लेषणात्मक, सूत्रात्मक और व्यंग्यात्मक शैली दृष्टव्य है।

इनका उपन्यास अपने उद्देश्य में भी पूर्ण सफल है। लेखक का उद्देश्य अंधविश्वासों, रूढ़ियों और पाखण्डों का विरोध कर अध्यात्म की प्रतिष्ठा करना है।

इनकी कहानियों की कथावस्तु मार्मिक है। कुछ कहानियाँ जैन पुराणों पर आधारित तथा कुछ कहानियाँ लेखक की कल्पना प्रसूत हैं। इनका कथानक सशक्त है। इनकी कहानियों की चरित्र-योजना भी प्रभावपूर्ण है, इनकी कहानियों के पात्रों की संख्या कम है, परन्तु जितने भी चरित्र हैं, वे अत्यंत उदात्त चरित्र से परिपूर्ण हैं।

इनकी कहानियों की संवाद-योजना स्वाभाविक भावप्रवण तथा रोचक है। संवाद नाटकीय, कौतूहलपूर्ण, चरित्रोद्घाटक तथा कथा को गतिशीलता प्रदान करनेवाले हैं।

डॉ. भारिल्ल के उपन्यास का मूल प्रतिपाद्य या मूलाभिव्यंजना अंधविश्वासों, रूढ़ियों एवं आडम्बरों पर करारा प्रहार कर जैन सिद्धान्तों और अध्यात्म की प्रतिष्ठा करना है।

डॉ. भारिल्ल ने अपने कथानकों का विषय अध्यात्म, बुद्धि व विवेक, सदाचार, सहानुभूति और मानवीय संवेदना को बनाया है; साथ ही समाज व धर्म का सच्चा स्वरूप स्पष्ट करते हुए सामाजिक व धार्मिक एकता को स्पष्ट किया है।

कथाकार डॉ. भारिल्ल के कथानकों में चिन्तन के कई नए आयाम उद्घाटित हुए हैं, जोकिं मानव-समाज को एक नई दृष्टि प्रदान करते हैं, और विभिन्न पहलुओं पर विचार करने को प्रेरित करते हैं।

वस्तुतः आज इस वर्तमान वैज्ञानिक युग में शोध तथा समीक्षा का महत्त्व सर्वविदित हैं; इसलिए किसी भी विषय का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत कर बुद्धिजीवी वर्ग को सहज ही आकृष्ट किया जा सकता है और अपनी बात समीक्षा शैली के माध्यम से मनीषियों एवं अध्यात्म रसिकजनों के मानस पटल पर अंकित की जा सकती है।

अतः इस लघुशोधप्रबन्ध में भी यही प्रयास किया गया है कि जन-सामान्य डॉ. भारिल्ल के कथानकों को हृदयंगम कर सके।

इसीप्रकार से इनकी कहानियों की मूलाभिव्यंजना आध्यात्मिकता को प्रतिष्ठित करने के साथ ही, संवेदना, सहानुभूति, बुद्धि-विवेक और नैतिक-सदाचार की स्थापना करना है।

इसतरह 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल और उनका कथा साहित्य' हिन्दी साहित्याकाश में दैदीप्यमान भानु की प्रखर रश्मियों को विकीर्णित कराकर, शशांक की शुभ्र विभा सी मधुरिम कान्ति मुखरित कर, साहित्य रसिकजन मानसों को रस प्लावित कर देता है।

वस्तुतः भारिल्लजी का कथासाहित्य का हिन्दी साहित्य में अनन्य स्थान रखता है। उनके द्वारा किए गए साहित्य सर्जन को हिन्दी साहित्य कभी विस्मृत नहीं कर सकता है।

❖ ❖ ❖

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

आधार ग्रन्थ सूची

१. सत्य की खोज : डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
२. आप कुछ भी कहो : डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
३. तत्त्ववेत्ता : डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनन्दन ग्रन्थ)

सहायक ग्रन्थ सूची

१. हिन्दी साहित्य में कथा शिल्प : डॉ. प्रताप नारायण टण्डन
२. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त : डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत
३. हिन्दी उपन्यास साहित्य का उद्‌भव और विकास : डॉ. लक्ष्मीकान्त सिन्हा
४. काव्य शास्त्र : डॉ. भागीरथ मिश्र
५. साहित्य परिचय : पदमुलाल पुन्नालाल बख्शी
६. उपन्यास सिद्धान्त : श्री श्याम मोहन जोशी
७. साहित्य का साथी : आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी
८. हिन्दी उपन्यास में कथाशिल्प का विकास : डॉ. प्रताप नारायण टण्डन
९. काव्य के रूप : डॉ. गुलाब राय
१०. कुछ विचार : प्रेमचन्द
११. दी आर्ट ऑफ फिक्शन : हेनरी जेम्स
१२. हिन्दी उपन्यास में चरित्र-चित्रण का विकास : रणवीर रांग्रा
१३. परमानेन्ट वेल्यूज इन फिक्शन : एडिथ वार्टन्
१४. हिन्दी उपन्यास : शिव नारायण श्रीवास्तव
१५. हंस (पत्रिका) १९३२ : प्रेमचन्द

१६. त्रिशंकु : अज्ञेय
१७. उपन्यासकार वृन्दावन लाल वर्मा : डॉ. शशिभूषण सिंहल
१८. साहित्यालोचन : डॉ. श्याम सुन्दर दास
१९. हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव और विकास : डॉ. प्रताप नारायण टण्डन
२०. हिन्दी उपन्यास साहित्य का शास्त्रीय विवेचन : डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री
२१. प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी उपन्यास : डॉ. कैलाश प्रकाश
२२. द प्रॉब्लम ऑफ स्टाइल : जे. मिडल्टन म्यूरी
२३. हिन्दी उपन्यास शिल्प बदलते परिप्रेक्ष्य : डॉ. प्रेम भटनागर
२४. हिन्दी उपन्यास रचना विधान और युगबोध : बसन्ती पंत
२५. आधुनिक समीक्षा, कुछ समस्याएँ : डॉ. देवराज
२६. साहित्य सिद्धान्त और समालोचना : डॉ. देवी प्रसाद गुप्त
२७. हिन्दी उपन्यास : प्रेमचन्द
२८. Talk a writing banglish sories : Arlobatus
२९. The graft of fictions : Tery lubbock

पत्र-पत्रिकाएँ

१. सन्मति सन्देश (मासिक) दिल्ली, फरवरी, १९७८
२. जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) विदिशा, १६ अक्टूबर १९७७
३. जिनवाणी (मासिक) जयपुर, नवम्बर १९७७
४. वीरवाणी (पाक्षिक) जयपुर, ३ अप्रैल १९८४, अंक-१३
५. जैनमित्र (साप्ताहिक) सूरत, ५ अप्रैल १९८४
६. अनेकान्त (त्रैमासिक शोध पत्रिका) नई दिल्ली, अप्रैल-जून १९८२
७. वीर (पाक्षिक) मेरठ, १ नवम्बर १९७७
८. जैन सन्देश (साप्ताहिक) मथुरा, २ फरवरी १९७८
९. समन्वय वाणी जयपुर, अप्रेल द्वितीय १९८४

❖ ❖ ❖